**Paper : BC - 206 (i) Indian Financial System** **Revised by : M.L. Singla**

**Lesson No. : 9**

# गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थायें
# (Non-Banking Financial Institutions)

**विषय-सामग्री (Contents)**

1. परिचय (Intorduction)
2. उद्देश्य (Objectives)
3. प्रस्तुतिकरण (Presentation)
   - 3.1 गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का अर्थ (Meaning of Non-Banking Financial Institutions)
   - 3.2 बैंकों और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन (Comparative study of Banks and Non-Banking Financial Institutions)
   - 3.3 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के कार्य (Functions of NBFIs)
   - 3.4 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के प्रकार (Types of NBFIs)
     - 3.4.1 भारतीय जीवन बीमा निगम (LIC of India)
     - 3.4.2 भारतीय सामान्य बीमा निगम (GIC of India)
     - 3.4.3 भारतीय यूनिट ट्रस्ट (UTI)
     - 3.4.4 पारस्परिक कोष (Mutual Funds)
     - 3.4.5 भविष्य निधि या पेंशन कोष (Providend Funds or Pension Funds)
     - 3.3.6 डाकघर (Post Offices)
     - 3.3.7 अन्य गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ (Other NBFIs)
   - 3.5 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का महत्व (Importance of NBFIs)
   - 3.6 भारतीय रिजर्व बैंक और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ (Reserve Bank of India and NBFIs)
   - 3.7 उदारीकरण उपाय-1996 (Liberalisation Measures-1996)
4. सारांश (Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)
6. नमूने के प्रश्न (Self-Assessment Questions)

## 1. परिचय (Introduction) :

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ या गैर-बैंकिंग मध्यस्थ, व्यापारिक बैंकों तथा सहकारी बैंको से अलग वित्तीय संस्थाओं का विभिन्न प्रकार का एक समूह है। ये संस्थाएँ भारतीय वित्तीय प्रणाली का एक महत्वपूर्ण अंग है। ये संस्थाएँ जनता से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोष एकत्रित करती है तथा अन्तिम व्ययकर्ताओं तक पहुँचाती है। इन कम्पनियों का रिजर्व बैंक के पास पंजीकरण होना आवश्यक है। इन गैर-बैंकिंग मध्यस्थों तथा बैंकों में मुख्य अन्तर यह होता है कि ये लोगों की बचतों को तो एकत्रित करती है किन्तु मांग जमाएँ नहीं स्वीकार करतीं। ये चैक भी जारी नहीं करतीं तथा बैंकों के अन्य कार्य भी नहीं करतीं। रिजर्व बैंक एक्ट 1934 जिसका 1994 में संशोधन किया गया, के अनुसार इनका मुख्य कारोबार जमा राशि प्राप्त करने तथा वित्तीय संस्थाओं की तरह ऋण देने, प्रतिभूतियों में निवेश करने, किराया खरीद वित्त तथा पट्टे पर देना है। भारत ने विकास बैंक IDBI, ICICI, IFCI SFCs भूमि विकास बैक आदि इस श्रेणी में आते हैं। अपने उधार जमाकर्ताओं को सावधि ऋण देने में इन्हें विशिष्टता प्राप्त है। इनमें तीन अखिल भारतीय सर्वनाधिक ऋण संस्थाएँ शामिल है। जीवन बीमा निगम, सामान्य बीमा निगम तथा यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया है। इनमें से UTI ही विशुद्ध रूप से गैर-बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थ है। अन्य दो संस्थाएँ केवल बीमा किस्तों से ही कोष इकट्ठा करती है इसके इलावा प्रोविडेन्ट फण्ड तथा डाकघर है। जो सार्वजनिक जमाओं को इकट्ठा करते हैं और इसे अन्तिम व्ययकर्ताओं को उधार देते हैं। इन संस्थाओं की एक बड़ी संख्या सार्वजनिक उद्यम है। इसके अतिरिक्त और भी कई छोटी गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ हैं। जैसे निवेश कम्पनियाँ वित्त (ऋण) कम्पनियाँ, किश्त खरीद वित्त कम्पनियाँ तथा बट्टा कम्पनियाँ। कुछ अपवादों को छोड़कर बाकि सब निजी क्षेत्रों की कम्पनियाँ हैं। इसके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट वित्त निगमें है। जो विशेष आर्थिक गतिविधियों के लिए ही वित्त उपलब्ध करवाती है। जैसे ग्रामीण विद्युतीकरण निगम, गृह और शहरी विकास निगम, गृह विकास वित्त निगम और फिल्म वित्त निगम। ये सामान्य जनता के लिये कोष उपलब्ध नहीं कराती बल्कि विशेष गतिविधियों के लिये ही वित्त उपलब्ध कराती है।

## 2. उद्देश्य (Objectives) :

इस पाठ का उद्देश्य आपको गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के कार्यों एवं महत्त्व से अवगत करवाना है। इसके साथ-साथ इस अभ्याय में गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का व्यापारिक बैंकों के साथ तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है और इस अध्याय का उद्देश्य आपको गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं पर उदारीकरण उपायों के पड़ने वाले प्रभाव से भी अवगत करवाना है।

## 3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)

इस अध्याय में गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के अर्थ, कार्यों एवं महत्त्व के साथ-साथ इनका व्यापारिक बैंकों से तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है। इसके अलावा उदारीकरण उपायों-1996 का गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं पर पड़ने वाले अभाव की व्याख्या की गई है।

### 3.1 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का अर्थ (Meaning of Non-Banking Financial Institutions):

रिजर्व बैंक (परिशोधित अधिनियम) 1997 के अनुसार गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्था से अभिप्राय एक वित्तीय संस्था से हैं जो वित्तीय कम्पनी है। जिसका मुख्य व्यवसाय किसी स्कीम या अन्य तरीके से जमाओं को प्राप्त करना है या उधार देना होता है। यह परिभाषा उन वित्तीय संस्थाओं को शामिल नहीं करती जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि प्रचालन है। इनमें स्टॉक एक्सचेंज व स्टॉक बरोकिंग कम्पनियाँ शामिल नहीं होतीं।

### 3.2 बैंकों और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन (Comparative study of Banks and Non-Banking Financial Institutions) :

तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए बैंकों एवं गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं में समानताए एवं अन्तर दोनों की व्याख्या की गई है :

#### (A) बैंकों तथा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं में समानताएँ (Similarties between Bank and Non-Banking Financial Institutions)

1. बैंको की तरह ही गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ भी लोगों से जमाएँ स्वीकार करते हैं और ऋण देते हैं।

2. बैंक आवश्यकता पड़ने पर केन्द्रीय बैंक से उधार लेकर मांग जमाओं का निर्माण करते हैं। इसी प्रकार जब गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ व्यापारिक बैकों (Commercial Banks) से उधार लेते हैं तो वे विभिन्न प्रकार के अप्रत्यक्ष ऋणों का निर्माण करते हैं।

3. बैंक तथा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ दोनों ही तरल कोष प्रदान करते हैं। बैक जमाएँ एवं बैंकों की अन्य परिसम्पत्तियाँ तथा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदान की गई परिसम्पत्तियाँ तरल परिसम्पत्तियाँ होती हैं। हालांकि तरलता की मात्रा सम्बन्धित वित्तीय मध्यस्थों की प्रकृति एवं क्रिया के अनुसार परिवर्तित होती रहती है।

4. व्यापारिक बैंक एवं गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ दोनों ही उधार लेने और देने वालों को मिलाने में बिचौलियों का काम करते हैं और दोनों ही ऋण योग्य कोषों के महत्त्वपूर्ण निर्माता है।

#### (B) व्यापारिक बैंक तथा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं में अन्तर

#### (Difference between Commercial Banks and Non-Banking Financial Institutions) :

1. **साख का निर्माण (Credit Creation) :** व्यापारिक बैंक उधार लेने वालों को उनके पास जमा करेन्सी उधार देते हैं एवं साख का निर्माण भी करते हैं और ब्याज से कमाई करते हैं। जबकि गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋणदाताओं से प्राप्त कोष को उधार लेने वालों को स्थानान्तरित कर दलाली कार्य किया जाता है परन्तु ये साख गुणक शक्ति नहीं रखते।

2. **नकद रिजर्व आवश्यकताएँ (Cash Reserve Requirements) :** व्यापारिक बैंकों को तरलता बनाए रखने के लिए केन्द्रीय बैंक के नियम अनुसार अपनी कुल जमाओं का एक हिस्सा नकद रिजर्व के रूप में रखना पड़ता है। वे इस रिजर्व को ऋण देने के लिए प्रयोग नहीं कर सकते जबकि गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के लिए वैधानिक रूप से ऐसा नकद रिजर्व रखना आवश्यक नहीं है।

3. **निवेश सूची ढांचा (Portfolio Structure) :** व्यापारिक बैंकों का निवेश सूची ढांचा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं से अलग तरह का होता है क्योंकि बैंक देयताएँ बहुत तरल होती हैं और इन देयताओं का थोड़े समय के नोटिस में मांगने पर भुगतान करना होता है।

4. **वसूली (Recovery) :** गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं द्वारा ब्याज दरों की गणना एवं वसूली के नए-नए तरीके अपनाए जाते हैं। अत: उनकी वसूली दरें अच्छी होती हैं जबकि व्यापारिक बैंकों को ऋण देने में विशिष्ट नियमों का पालन करना पड़ता है और इनकी ब्याज दरें भी NBFIs की अपेक्षा काफी कम होती हैं तथा बैंकों द्वारा निगमों को ज्यादा ऋण दिया जाता है और नियमों को भुगतान न करने की दर बहुत ऊँची होती है।

5. **जमानत (Security) :** गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएं बैंकों की अपेक्षा अधिक जमानत लेकर ऋण देती हैं यह जमानत सामान्यतया अंशों (Shares) एवं उत्तर-दिनांकित (Post Dated) चैकों के रूप में होती हैं।

6. **जोखिम (Risk) :** बैंक कुछ निश्चित नियमों की वजह से ऋण देने से पहले प्रोजेक्टों का विस्तार से मूल्यांकन करते हैं। अत: ऋणों की मंजूरी में विलम्ब होती है परन्तु जोखिम कम जबकि दूसरी ओर गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं को ऋण देने के लिए कम सख्त नियमों का पालन करना पड़ता है। अत: वे प्रोजेक्टों का विस्तार से मूल्यांकन नहीं करते हैं। NBFIs बैंकों की अपेक्षा अधिक जोखिम उठाते हैं।

अत: हम कह सकते हैं कि गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ/मध्यस्थ व्यापारिक बैंक तथा सहकारी बैंकों से अलग, संस्थाओं का एक विभिन्न प्रकार का समूह है। जो वित्तीय विधियों में कार्यरत है। ये ऋण योग्य कोषों में प्रयोग के उद्देश्य से सार्वजनिक बचतों का एकत्रीकरण करके व्यापारिक बैंकों से प्रतिस्पर्धा करते हैं। संक्षेप में गैर-बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थ व्यापारिक बैंकों से अलग, वे सभी संस्थाएँ तथा संगठन हैं जो बचतकर्ताओं की ओर से निवेशकर्ताओं की ओर कोषों को हस्तांतरित करने का कार्य करती हैं।

### 3.3 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के कार्य (Functions of NBFIs) :

इनके मुख्य कार्य भी सामान्यता बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं जैसे ही हैं।

1. **ऋण योग्य कोषों के दलाल (Brokers of Loanable Funds) :** ये संस्थाएँ ऋण योग्य कोषों के दलालों के रूप में कार्य करती है। ये अन्तिम बचतकर्ताओं तथा निवेशकर्ताओं के बीच एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करती हैं। ये बचतकर्ताओं को अप्रत्यक्ष प्रतिभूतियाँ बेचती हैं और निवेशकर्ताओं से प्राथमिक प्रतिभूतियाँ खरीदती हैं इस प्रकार से ये ऋणों को साख में परिवर्तित करती है। इस प्रकार से स्वयं जोखिम लेती है तथा निवेशकर्ताओं के जोखिम को कम करती है।

2. **बचतों को एकत्रित करना (Mobilisation of Savings) :** ये संस्थाएँ बचतों को जनता के हित तथा लाभ के लिये एकत्रित करती हैं तरलता तथा सुरक्षा जैसी निपुण वित्तीय सेवाएँ प्रदान करके अधिक कोषों को एकत्रिक करती है।

3. **निवेश (Investment) :** जनता की बचतों को एकत्रित करके उन्हें उत्पादक निवेश की ओर ले जाती है। प्रत्येक वित्तीय मध्यस्थ अपनी स्वयं की निवेश नीति का अनुसरण करता है। जैसे बीमा कम्पनियाँ दाण्डों तथा प्रतिभूतियों में निवेश करती है। इस प्रकार निवेश से पूंजी निर्माण होता है तथा आर्थिक विकास में वृद्धि होती है।

4. **पूंजी बाजार में स्थिरता लाना (Stablising the capital Market) :** ये संस्थाएँ पूंजी बाजार में विभिन्न परिसम्पत्तियों एवं दायित्वों में व्यापार करते है और परिसम्पत्तियों की मांग तथा पूर्ति में सन्तुलन स्थापित करती है। नियमानुसार तथा कानूनी ढाँचे में रह कर बचतकर्ताओं के हितों की रक्षा करती हैं और पूंजी बाजार में स्थिरता लाती है।

5. **तरलता प्रदान करना (To Provide Liquidity) :** इन संस्थाओं का मुख्य कार्य किसी भी वित्तीय परिसम्पत्ति को नकदी में सरलता से तेजी से बिना पूंजीगत हानि के बदलना है। इसलिए ये तरलता उपलब्ध कराती हैं ये संस्थाएँ ऐसा आसानी से कर सकती है क्योंकि

   1. ये लोगों को अल्पकालीन ऋण देती हैं।

   2. विभिन्न प्रकार के उधार लेने वालों में ये ऋणों में विविधता लाती हैं।

### 3.4 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के प्रकार (Types of NBFIs) :

भारत में विभिन्न प्रकार की निम्नलिखित गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ पाई जाती है।

#### 3.4.1 भारती जीवन बीमा निगम (LIC of India) :

भारत में चल रही सभी बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण करके 1 सितम्बर 1956 में भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना हुई। LIC का मुख्य उद्देश्य जीवन बीमा व्यवसाय को चलाना, लोगों की बचतों को एकत्रित करना तथा लाभकारी निवेश करना है। LIC अपने कोषों का 50% सरकारी प्रतिभूतियों में, 10% अन्य निवशों में तथा 35% सार्वजनिक तथा निजी सीमित कम्पनियों में, निवेश पालिसी धारकों को ऋण देने में लगाती है। मुख्य मूल सिद्धान्त कोषों की सुरक्षा से सम्बद्ध है न कि निवेश से प्राप्त आय को अधिकतम करने से है। LIC स्टोरिया न होकर दीर्घकालीन निवेश करता है। LIC जीवन बीमें का आवरण दे कर एक महत्वपूर्ण वित्तीय मध्यवर्ती के रूप में कार्य करती है। यह निगम क्षेत्र तथा सरकार के लिये भी कोषों का महत्त्वपूर्ण स्त्रोत है तथा सामाजिक दृष्टि से वांछनीय क्षेत्रों में निवेश कर दिया जाता है। महरोत्रा कमेटी की सिफारिशों के आधार पर 1999 में बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण कानून पारित किया गया। इस कानून ने बीमा क्षेत्र से सरकारी एकाधिकार को समाप्त कर दिया। LIC देश में औद्योगिक विकास की गति को बढ़ाने में सहायता देता है। ऋण देकर तथा उनके शेयरों और डिबेन्चरों में अंशदान देकर LIC कम्पनियों को वित्तीय सहायता देती है। आजकल ये ऋण आल इण्डिया वित्तीय संस्थाओं IDBI, IFCI, UTI, GIC आदि के सहयोग से दिये जाते हैं।

#### 3.4.2 भारतीय सामान्य बीमा निगम (GIC) :

भारतीय सामान्य बीमा निगम की स्थापना जनवरी 1973 में हुई थी GIC एक होल्डिंग कम्पनी है इसकी चार सहायक कम्पनियाँ हैं—

1. National Insurance Co. Ltd.
2. New Indian Insurance Co. Ltd.
3. Oriental Fire and General Insurance Co. Ltd.
4. United India Insurance Co. Ltd.

GIC का प्रत्यक्ष व्यवसाय केवल विमानन बीमा तक ही प्रतिबन्धित है। सामान्य बीमा की देखभाल चारों सहायकों द्वारा की जाती है और समाज के विभिन्न वर्गों की विभिन्न आवश्यकताओं की उप युक्तता के अनुरूप विभिन्न प्रकार की पालिसियों का प्रचलन करती है। आज बीमा इसका मुख्य व्यवसाय है। GIC उस स्थिति में क्षतिपूर्ति की गारंटी देता है। जब पालिसी धारकों को किसी बीमाकृत खतरे के हो जाने के फलस्वरूप वित्तीय हानि उठानी पड़ती है। GIC की निवेश नीतियों का उद्देश्य आय को अधिकतम करना, सुरक्षित सुनिश्चित करना और कोषों को तरलता देना तथा साधनों को राष्ट्रीय उद्देश्य एवं प्राथमिकताओं के अनुसार लगाना है। यह निवेश योग्य कोषों का 70% भाग अर्थव्यवस्था के समाज उन्मुख क्षेत्रों में निवेश करना आवश्यक है। GIC की सकल प्रीमियम आय LIC जितनी आय ही है।

#### 3.4.3 भारतीय यूनिट ट्रस्ट (UTI) :

यह गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का बहुत ही महत्वपूर्ण रूप है। UTI एक निवेश संस्था है। ये छोटे-छोटे निवेशकर्ताओं को भारत के औद्योगिक विकास का एक भाग और न्यूनतम जोखिम के साथ उत्पादनक निवेश प्रदान करता है। UTI की स्थापना 1 फरवरी 1964 में एक वैधानिक निगम के रूप में हुई थी।

UTI का उद्देश्य मध्यम तथा निम्न आय समूह की बचतों को बढ़ाना तथा जमा करना तथा यूनिट धारकों को इस योग्य बनाना है कि वे देश में तेजी से बढ़ते औद्योगिकीकरण के लाभों तथा प्रगति में भाग प्राप्त कर सकें। UTI, IDBI का सहयोगी है। UTI विभिन्न स्कीमों के अन्तर्गत यूनिट बेचकर समाज की बचतों को एकत्रित करता है। इसकी कुल 79 स्कीमें हैं। UTI की पहली स्कीम US-64, 1964 में शुरू की गई थी। इसका अपनी कुल जमाओं का 85% निवेश कम्पनियों के शेयरों और डिबेन्चरों में किया जाता है। 3% समय जमाओं में निवेश किया जाता है। 8% सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश किया जाता है। भारत सरकार ने 2002 को भारतीय यूनिट ट्रस्ट की हालत सुधारने के लिये इसका विभाजन कर दिया है।

**1. पूर्व सुरक्षित भारतीय यूनिट ट्रस्ट :**

इसमें US-64 शामिल है। UTI-1 में होने वाले घाटे की भरपाई सरकार करेगी।

**2. नया भारतीय यूनिट ट्रस्ट - II :**

इसमें सभी मूल्य आधारित स्कीमें शामिल है। इसका प्रबन्ध एक निश्चित समय तक बोर्ड ऑफ ट्रस्ट्रीज के द्वारा किया जाता है। एक निर्धारित समय के पश्चात् इसका विनिवेश कर दिया जाता है। UTI-I और UTI-II का संचालन SEBI कानून के अन्तर्गत होगा।

### 3.4.4. पारस्परिक कोष (Mutual Funds) :

एक पारस्परिक कोष एक न्यास या ट्रस्ट है यह जनता की बचतों को सामान्य निधि में जमा करता है। कोई भी व्यक्ति जिसके पास कम से कम कुछ हजार रूपयों का निवेश योग्य अतिरिक्त शेष है वह पारस्परिक कोषों में निवेश कर सकता है। ये निवेशकर्ता उस विशेष पारस्परिक कोष योजना की इकाईयों को खरीद सकते हैं। जिसने निवेश के उद्देश्य एवं रणनीति परिभाषित कर दी है। इस प्रकार से प्रबन्धक एकत्रित कोष को विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों में निवेश कर दिया जाता है। भारत में इस समय 36 पारस्परिक कोष है और 200 से ऊपर स्कीमें है।

### 3.4.5. भविष्य निधि या पेंशन कोष (Providend Funds or Pansion Funds) :

यह घरेलू क्षेत्र की दीर्घकालीन अनुबन्धित बचतों का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। इस कोष में लोगों का वार्षिक अंशदान तेज गति से बढ़ रहा है। कानून के अन्तर्गत उद्योग कोयला, खनन, बागान, तथा सेवाओं के संगठित क्षेत्रों में भविष्य निधि को अनिवार्य बना दिया गया है अर्थव्यवस्था के संगठित क्षेत्र के विकास और भविष्य निधि कोषों के माध्यम से बचतों को एकत्रीकरण और आगे बढ़ेगा। मजदूरी प्राप्त करने वाले कर्मचारी भविष्य निधि कोषों में शामिल होने के लिये प्रोत्साहित होते हैं। उसमें अपना अंशदान देते हैं इस कोष में मालिक भी भैचिंग अंशदान देते है आयकर में भी भविष्य निधि अंशदान पर छूट मिलती है तथा आवश्यकता पड़ने पर व्यक्ति अपने भविष्य निधि अंशदान में से उधार भी ले सकता है।

### 3.4.6 डाकघर (Post Offiees) :

डाकघर लोगों की छोटी-छोटी बचतों को एकत्रित करने का महत्त्वपूर्ण जरिया है। ग्रामीण, शहरी अर्धशहरी क्षेत्रों में बिखरी हुई छोटी-छोटी बचतों को एकत्रित करने के एक मात्र उद्देश्य से ही डाकघर बचत बैंकों की स्थापना की गई। इन्हें समान्यता बचत बैंक कहा जाता है। भारत की अधिकतर जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है तथा व्यापारिक बैंकों का विकास बहुत धीमा तथा अंसतुलित रहा है इसलिये

ऐंसे क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में बैंकिंग आदतें जागृत करने के लिये तथा उनकी छोटी–छोटी बचतों को इकट्ठा करने के लिये बचत बैंक खोले गये। भारत में जिन स्थानों पर व्यापारिक बैक नहीं है, वहाँ डाकघर व्यापारिक बैंकों की भूमिका निभाते हैं। ये लोगों की जमायें स्वीकार करते हैं। बचत खाते खोलते है जमाराशि पर ब्याज देते हैं। डाकघर ने निम्न तथा बन्धी आय वर्ग वाले लोगों के लिये कई योजनाएँ शुरू कर रखी है। जैसे राष्ट्रीय बचत सर्टिफिकेट मासिक आय योजना आदि। इन योजनाओं के तहत ये लोगों को बचत करने को प्रोत्साहित करते हैं। अधिकांश रूप से ये बचत बैंक ग्रामीण क्षेत्रों तथा दूरवर्ती क्षेत्रों में कार्य कर रहे है।

### 3.4.7 अन्य गैर-बैंकिंग वित्तीय कम्पनियाँ (Other NBFIs) :

अन्य प्रकार की गैर–बैंकिंग कम्पनियाँ जनता से जमाएँ स्वीकार करती है। रिजर्व बैंक ने इन्हें दो श्रेणियों में बांटा हैं : (1) वित्तीय कम्पनियाँ (2) गैर–वित्तीय कम्पनियाँ। केवल वित्तीय कम्पनियाँ को गैर–बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ कहा जाता है। क्योंकि ये जनता से कोष इकट्ठा करती है और उधार देती है इसके विपरीत गैर–वित्तीय कम्पनियाँ वे कम्पनियाँ हैं जो व्यापार में लगी होती है और जनता की जमाओं का प्रयोग निजी कार्यों में लगाती हैं। ये कम्पनियाँ चाहे प्राइवेट लिमिटेड हों, पब्लिक लिमिटेड हो, सरकारी हों या गैर–सरकारी हों, भारतीय रिजर्व बैंक प्रति वर्ष इन सभी का जमाओं से सम्बन्धित आंकडे एकत्रित करता है। गैर–बैंकिंग वित्तीय कम्पनियाँ व्यापारिक बैंकों की प्रतियोगी संस्थाएँ नहीं हैं और भारतीय रिजर्व बैंक की साख नीति तथा मौद्रिक नीति के लिये कोई गम्भीर समस्या पैदा नहीं करतीं। लेकिन इनके खातों का निरीक्षण किया जाता है। गतिविधियों पर सख्त नियमन रखा जाता है ताकि जनता की जमाएँ सुरक्षित रह सके। इनका वित्त बैंक वित्त से अधिक मंहगा होता है। भारत में निम्नलिखित विभिन्न गैर–बैंकिंग वित्तीय कम्पनियाँ हैं।

### 1. निवेश कम्पनियाँ (Investment Companies) :

वित्तीय मध्यस्थ का विशुद्ध रूप निवेश कम्पनियाँ है। ये निगमीय प्रतिभूतियों में निवेश के लिये सार्वजनिक बचतों को एकत्रित करती है। वित्तीय मध्यस्थ के अलावा कोई अन्य सेवा प्रदान नहीं करती। संयुक्त पूंजी कम्पनी के उदय होने के कारण निजी क्षेत्र में बड़े पैमाने के औद्योगिक उद्यमों के लिये रास्ता खुल गया है। निवेश करने वाले लोगों के लिये समता शेयर एक ऐसा अवसर प्रदान करते हैं जिसके द्वारा वे प्रबन्ध में बिना भाग लिये कम्पनियों के लाभों के भागीदार बन सकते है। परन्तु निगमीय प्रतिभूतियों में निवेश जोखिमपूर्ण एवं नाजुक दोनों प्रकार के हो सकते हैं। किन्ही भी कारणों से स्टॉक कीमतों में व्यापक उतार–चढ़ाव हो सकते है। जिस की वजह से अनुमानित लाभ पूंजी हानियों में बदल सकते हैं। छोटे निवेशकर्ताओं के पास निवेश पोर्टफोलियो छोटा होने के कारण जोखिम खुलकर समाने नहीं आता। इसी संदर्भ में वित्तीय मध्यस्थों की आवश्यकता महसूस हुई जो विभिन्न रूप से निगमीय प्रतिभूतियों में निवेश करने के लिये विशिष्टता प्राप्त किये हैं। जो व्यवसायिक प्रबन्ध के अन्तर्गत इसकी व्यवस्था कर सकते है। ये मध्यस्थ जिन प्रातमूतियों को खरीदते हैं जो प्राथमिक और व्यक्तिगत रूप से जोखिमपूर्ण है ये उन्हें अप्रत्यक्ष या द्वितीयक प्रतिभूतियों में बदल सकते हैं जो कम जोखिमपूर्ण होती है। भारत में निवेश कम्पनियाँ जनता की जमाओं को अधिक मात्रा में अपनी ओर आकर्षित नहीं कर पा रही है। मार्च 2001 तक भारत में इन कम्पनियों की संख्या 3700 थी। इनके अपने कोष लगभग 525 करोड़ तथा अन्य प्राप्तियाँ 2685 करोड़ की निजी लिमिटेड कम्पनियाँ कुछ निजी व्यक्तियों के निवेश को प्रबन्धित करने के लिये स्थापित की गई है। सार्वजनिक लिमिटेड कम्पनियाँ जनता को समता (equity) बेचती है। ऋण देती है, उस आय का वितरण भी करती है। जो लाभांश के रूप में प्राप्त होती है। सभी औद्योगिक समूहों की अपनी निवेश कम्पनियाँ है। इनका मुख्य उद्देश्य अपने समूह विशेष के अन्तर्गत नियन्त्रण करना, प्रबन्ध करना तथा कम्पनियों को सहायता प्रदान करना है।

**2. ऋण कम्पनियाँ (Loan Companies) :**

ऋण कम्पनियाँ यानि वित्त कम्पनियाँ गैर–बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का एक रूप है। जो पूरे भारतवर्ष में पायी जाती हैं। कुल मिलाकर सन् 2002 में भारत में 1500 ऋण कम्पनियाँ थीं जिसमें से 700 सार्वजनिक लिमिटेड थी। इनका कुल दायित्व 8300 करोड़ रूपये का था। ये कम्पनियाँ लोगों की सावधि जमाओं को अपनी ओर आकर्षित करती हैं। ऊँची ब्याज की दर देती है, कई प्रकार की स्कीमें देती है, जिसमें इनाम, उपहार, बीमा आदि शामिल है। एकत्रित राशि का एक भाग सावधि जमाओं के रूप में व्यापारिक बैंकों के पास रखते है। शेष राशि थोक व्यापारियों, खुदरा व्यापारियों, लघु उद्योगों, तथा स्वरोजगार प्राप्त व्यक्तियों को ऋण तथा अग्रिम के रूप में देती हैं। जिन लोगों को व्यापारिक बैंकों से पर्याप्त ऋण नहीं मिल पाता, ज्यादातर वे ही इन ऋण कम्पनियों से मदद लेते है। इन ऋण कम्पनियों के असुरक्षित होने के कारण ही ब्याज की दर अधिक होती है। यह लगभग 36% प्रतिवर्ष होती है। इसके बावजूद भारत में इन वित्त कम्पनियों का व्यवसाय काफी बढ़ रहा है। क्योंकि उधार लेने वालों की अधिकतर संख्या अपनी मांग की पूर्ति के लिये इन वित्त कम्पनियों के पास आती है। इन वित्त कम्पनियों के व्यवसाय का नियमन किसी प्रधिकारी द्वारा नहीं किया जाता।

**3. किस्ती खरीद वित्त कम्पनियाँ (Hire-Purchase Finance Companies) :**

किस्ती खरीद का अर्थ है किस्त योजना पर खरीद करना। किस्ती योजना में लगी साख का प्रबन्ध इन वित्त कम्पनियों के द्वारा किया जाता है। इस सुविधा की आवश्यकता टिकाऊ घरेलू वस्तुओं जैसे फ्रिज. टी.वी. सिलाई मशीनें, कार, मोटर साईकल, स्कूटर और खेती बाड़ी, मछली पालन तथा1 विनिर्माण के लिये छोटे खरीददारों द्वारों की जाती है। ये सभी टिकाऊ वस्तुएँ कई वर्षों तक सेवाएँ या आय देती है। जिन्हें खरीदने के लिये खरीददार भुगतान करता है। इसीलिये यदि उचित दरों पर किस्तों द्वारा दी जाने वाली भुगतान सुविधा उपलब्ध है तब क्रेता इनको खरीदने के लिये प्रेरित होते हैं। जब तक ऋणों का पूर्ण भुगतान नहीं हो जाता ये टिकाऊ वस्तुएँ स्वयं जमानत का कार्य करती है। टिकाऊ घरेलू वस्तुऐं यातायात प्रचालन, छोटे उत्पादकों तथा लघु उद्यमियों को दुकान स्थापित करने में किस्ती खरीद साख एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। भारत में इस प्रकार की साख की सुविधा सीमित एवं अविकसित है इस क्षेत्र में वित्तीय संस्थाओं के चार रूप प्रचलन में है। व्यापारिक बैंक राज्यवित्त निगम, राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम और किस्ती खरीद वित्त कम्पनियाँ। किस्ती खरीद का अधिकांश भाग वाहन और कलपुर्जे सड़क यातायात उद्योग को जाता है।

**4. चिट फण्ड (Chit Funds) :**

चिट फण्ड भी जमाएँ एकत्रित करने वाली संस्थाएँ है। चिट फण्ड के सदस्य इन जमाओं को नियमित रूप से अपना आवधिक अंशदान देते है। इसकी जिम्मेवारी पहले निर्वाचित किसी कोष सदस्य को सौंप दी जाती है। प्रत्येक सदस्य को यह आश्वासन दिया जाता है कि उसकी बारी आने पर उसकी कुल राशि उसको मिल जायेगी। चिट फण्ड अधिकांश केरल और तमिलनाडु में पाये जाते है। भारत में चिट फण्ड कम्पनियों की संख्या लगभग 2000 से ऊपर हैं उनकी कुल राशि लगभग 900 करोड़ है।

**5. निधियाँ (Nidhis) :**

निधियाँ अधिकतर दक्षिण भारत विशेष कर तमिलनाडु में पायी जाती है। ये पारस्परिक कोष (Mutual Funds) के रूप में कार्य करती है तथा केवल अपने सदस्यों से व्यवहार करती हैं। शहरों में अधिकतर

मध्यम वर्गीय परिवारों में बहुत लोकप्रिय है। निधियों में कोष का मुख्य स्रोत सदस्यों से प्राप्त जमाएँ है। ये अपने सदस्यों को घर बनाने के लिये, मुरम्मत आदि के लिये अग्रिम (Advance) देती है। निधियों के द्वारा दिये गए ऋण सुरक्षित होते हैं तथा इनके द्वारा ली जाने वाली ब्याज की दरें भी उचित होती है। निधियाँ स्थानीय होती है, एक आफिस संस्था होती है, जो कम लागत पर अपने सदस्यों के मध्यस्थीय सेवाएँ प्रदान करती है। इनके कोष भी सीमित होते हैं।

**6. इक्विपमेंट लीजिंग वित्त कम्पनियाँ (Equipment Leasing Finance Companies) :**

लीजिंग एक प्रकार से किराया प्रणाली है। इनका मुख्य कार्य औद्योगिक कम्पनियों को एक निश्चित किराये के बदले में इक्यूपमेंट को लीज यानि पट्टे पर प्रयोग करने का अधिकार देता है। किराये में मशीनों की घिसावट, प्रारम्भिक पूंजी मूल्य पर ब्याज तथा सेवा खर्चे शामिल किये जाते है। ये कम्पनियाँ जनता तथा शेयर होल्डरों से जमाओं के अतिरिक्त निजी कोषों का भी इस्तेमाल करती हैं। पिछले कुछ वर्षों में इनका विकास बड़ी तेजी से हुआ। 2001 में इनकी संख्या 200 थी तथा कुल जमाएँ 15,322 करोड़ रूपये थी। ज्यादातर निजी प्राइवेट लिमिटेड कम्पनियाँ हैं। परन्तु हाल ही में कई व्यापारिक घराने इस क्षेत्र में प्रवेश कर चुके हैं। उन्होंने अपनी सहायक लीजिंग व किस्ती खरीद फर्मे भी स्थापित कर दी है ये घराने अपनी ही वस्तुओं की बिक्री के लिये वित्त का प्रबन्ध करती है। तथा कुल बिक्री को बढ़ावा देती हैं। लीजिंग व्यवसाय संभाव्य को देखते हुए व्यापारिक बैंकों को भी लीजिंग कम्पनियों के शेयरों में निवेश की अनुमति दे दी गई। भारतीय स्टेट बैंक तथा ICICI ने भी अपनी सहायक इकाईयाँ स्थापित कर दी हैं।

**7. गृह वित्त कम्पनियाँ (Housing Finance Companies) :**

गृह वित्त कम्पनियाँ, गृह निर्माण मुरम्मत आदि के लिये वित्त प्रबन्ध करती है। भारत में इन वित्त कम्पनियों ने विशेष प्रगति नहीं की है। मार्च 2001 के अन्त तक इनकी संख्या लगभग 116 थी। भारत में National Housing Bank इनको ऋण देता है। गृह निर्माण के क्षेत्र में Housing and Urban Development Corporation Ltd. (HUDCO) तथा Housing Development Finance Corporation Ltd. (HDFC) भी सराहनीय कार्य कर रहे है।

### 3.5 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं का महत्त्व (Importance of NBFIs) :

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ वित्तीय परिसम्पत्तियों को तरलता व सुरक्ष प्रदान करके, अन्तिम ऋणदाताओं से अन्तिम ऋणियों के पास कोषों का हस्तांतरण करके उत्पादक निवेशों में लगवाकर पूंजी निर्माण तथा आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करती हैं। इनका महत्त्व निम्न प्रकार से व्यक्त हैं—

**1. अर्थव्यवस्था को लाभ (Benefit to the Economy) :**

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ देश के केन्द्रीय बैंक की साख तथा मौद्रिक नीतियों को लागू करने में बहुत अधिक सहायता प्रदान करती है और आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करती है। अर्थव्यवस्था को मुद्रा पूर्ति उपलब्ध कराती हैं, वित्तीय बाजारों के कार्यकरण को सरल बनाती हैं, अर्थव्यवस्था को उचित दिशा प्रदान करती हैं, विकास को प्रोत्साहित करती हैं। ये संस्थाएँ ऋणदाता और ऋणी के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी होती हैं इसीलिये ये जमाखोरी को निरुत्साहित करती है। निष्क्रिय बचतों में गतिशीलता लाती है, निवेश को बढ़ाती हैं। इस प्रकार से गैर-वित्तीय संस्थाएँ अर्थव्यवस्था में विकास को प्रोत्साहित करती है।

**2. विभिन्न क्षेत्रों में सहायता का स्रोत (A source of Help to Different Sectors) :**

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के चहुँमुखी विकास में सहायता प्रदान करती है। घरेलू क्षेत्र को इस बात की प्रेरणा देती है कि वो अधिक से अधिक बचते करें और उन बचतों को लाभदायक प्रयोगों में लगाएँ। उन्हें उपभोक्ता साख ऋण भी उपलब्ध कराती है। अत: ये समाज के घरेलू क्षेत्र को बचतें और निवेश दोनों के लिए प्रोत्साहित करती हैं। ये संस्थाएँ व्यवसायिक क्षेत्र के लिये भी ऋण उपलब्ध कराती हैं। परियोजनों को बन्धक ऋण देती है, बाण्ड्स तथा शेयर खरीदने में सहायता करती है। प्लाण्टों, साज-सज्जा आदि में निवेश को सुविधाजनक बनाती है। इस प्रकार से गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति का महत्वपूर्ण स्रोत है।

**3. बचतकर्ताओं को लाभ (Benefits to Savers) :**

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ अन्तिम ऋणदाताओं तथा अन्तिम ऋणियों को समीप लाकर जनता में जमा वृत्र को कम करती है। जनता तरलता को कई कारणों से अधिमान देती है। जिस वजह से लोगों के पास उनकी जमाएँ निष्क्रिय पड़ी रहती है ये संस्थाएँ जमाकर्ताओं को कई सुविधाएँ तथा सेवाएँ प्रदान करके उन्हें अपनी बचतों से अधिक वास्तविक प्राप्ति तथा आय प्राप्त कराती है।

**4. निवेशकर्ताओं को लाभ (Benefits to Investors) :**

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ अपनी बचतों का निवेश प्राथमिक प्रतिभूतियों में करता है। प्रतिभूतियों की कीमतों में वृद्धि होती है। ब्याज की दरें गिरती है। ब्याज की कम दरों से बचतकर्त्ता और निवेशकर्ता दोनों को लाभ प्राप्त होता है। बचतकर्त्ता इसलिए लाभान्वित होते हैं क्योंकि ये संस्थाएँ इनके कोषों को बहुत अधिक सुरक्षा प्रदान करती हैं। ये मध्यस्थ जोखिम को अपने ऊपर ले लेती है। जिससे ऋणियों तथा ऋणदाताओं दोनों का जोखिम कम हो जाता है। निवेशकर्त्ताओं के लिए उधार ली गई राशि की वास्तविक लागतें घटती है जिनसे आगे वस्तुओं तथा सेवाओं की लागतें कम होती है। अत: गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

### 3.6 भारतीय रिजर्व बैंक तथा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ (RBI and NBFIs) :

भारत में गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ काफी लम्बे समय से कार्य कर रहा है। शुरू में इनका पंजीकरण Indian Companies Act के अन्तर्गत होता था। भारतीय रिजर्व बैंक का इन पर कोई नियन्त्रण नहीं था। वित्तीय मध्यस्थता के क्षेत्र में ये एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। नरसिम्हम समिति ने इनकी वित्तीय प्रणालियों को मुख्य धारा में मिलाने की सिफारिश की थी। 12 अप्रैल, 1993 को इन कम्पनियों के पंजीकरण के लिये एक योजना बनाई। इस योजना के अनुसार वे सभी कम्पनियाँ जिनके अपने कोष 50 लाख रूपये या इससे अधिक हैं। उन्हें अपने आपको भारतीय रिजर्व बैंक के पास पंजीकृत कराना होगा। रिजर्व बैंक के आदेशानुसार वर्ष में एक बार इन्हें किसी भी क्रेडिट रेटिंग एजेन्सी से अपनी रेटिंग करानी होगी और उन्हें एक न्यूनतम निर्धारित रेटिंग अवश्य प्राप्त करनी होगी। साख रेटिंग का उद्देश्य यह है कि जमाकर्त्ताओं तथा साखकर्त्ताओं को इन कम्पनियों के बारे में पूर्ण सूचना मिलती रहे ताकि उनके हित सुरक्षित रहे। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक ने इन कम्पनियों द्वारा अपनी जमाओं पर दिये जाने वाले ब्याज की दरों को भी निश्चित कर दिया है।

### 3.7 उदारीकरण उपाय 1996 (Liberalisation Measures 1996) :

नए आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत 1996 में रिजर्व बैंक ने इन कम्पनियों के लिये कुछ उदारीकरण उपायों की घोषणा की ताकि उन कम्पनियों को प्रोत्साहन मिले जो सुदृढ़ व्यावसायिक सिद्धान्तों पर अपनी

कार्यप्रणाली चला रही हैं। 9 जनवरी, 1997 को रिजर्व बैंक को यह अधिकार प्राप्त हो गया है कि वह इन कम्पनियों का नियन्त्रण व नियमन कर सके। वे शर्तें जिसके अन्तर्गत ये कम्पनियाँ कार्य कर सकती है वे निम्नलिखित हैं:

1. अनियमित कम्पनियों को जमाएँ स्वीकार करने पर रोक दिया गया है। यदि इन कम्पनियों के पास उस तारीख तक कोई जमाएँ हैं तो उन्हें एक दम जमाकर्ताओं को वापस लौटा देगी।
2. रिजर्व बैंक उसे पंजीकरण प्रमाण-पत्र लेना होगा। यानि अनिवार्य लाईसैन्सिंग।
3. इनका अपना निजी शुद्ध कोष 50 लाख रूपये होना चाहिए।
4. प्रत्येक कम्पनी को एक सुरक्षित कोष का निर्माण करना होगा तथा लाभांश घोषित करने से पहले इसमें अपने शुद्ध लाभी का कम से कम 20% हस्तांतरिक करना।
5. यदि कोई कम्पनी जमाओं की शर्तों के अनुरूप किसी जमा या उसके भाग को वापस करने में असफल रहती है तब कम्पनी कानूनी बोर्ड एक निश्चित अवधि के भीतर उसके भुगतान का आदेश दे सकता है।
6. रिजर्व तक गलती करने वाली कम्पनी पर जुर्माना लगा सकता है।
7. यदि कोई कम्पनी अपने ऋणों को वापिस करने के अयोग्य है तब रिजर्व बैंक कम्पनी एक्ट 1956 के अन्तर्गत उसके विरुद्ध समापन का आवेदन पत्र डाल सकता है।

भारत में इस समय संगठित और औद्योगिक क्षेत्रों में 40,000 वित्त कम्पनियाँ है। संक्षेप में गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ न केवल बचतों कर एकत्रीकरण करके लोगों में बचत आदतों को प्रोत्सहन देती है बल्कि बचतों का अवशोषण करने के लिए निवेशकर्त्ताओं को प्रेरित भी करती है। वे निवेशकर्त्ताओं को भी कई सेवाएँ प्रदान करती है ताकि इन बचतों का प्रयोग पूंजी निर्माण के लिये कर सके। क्योंकि पूंजी निर्माण का आर्थिक विकास के साथ सीधा सम्बन्ध पाया जाता है। अत: गैर-बैंकिंग वित्तीय मध्यवस्थता ऋण दात्ताओं तथा ऋणियों के बीच मध्वस्थ बनकर आर्थिक विकास की महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करती है।

## 4. सारांश (Summary) :

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं द्वारा बचतों को इकट्ठा करके और निवेश हेतु ऋण प्रदान कर एवं किराया क्रय की सुविधा प्रदान कर आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जा रही है। किन्तु इनका प्रचालन लक्ष्यों के अनुरूप नहीं हैं। हालांकि जनवरी 1997 के अध्यादेश तथा जनवरी 1998 के अधिनियम द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक को निगमीय और गैर-निगमीय दोनों प्रकार की NBFIs के ऊपर अधिक नियन्त्रण स्थापित करने एवं इन NBFIs को अधिकार क्षेत्रों में लाने का प्रयास किया गया है। वर्तमान में सभी NBFIs पूँजी वर्गीकरण एवं पर्याप्तता, ऋण एवं निवेश, ब्याज दरों का निर्धारण क्रेडिट रेंटिंग एवं लेखा मानकों आदि के सम्बन्ध में निर्देश देने के अधिकार दिए गए है। परन्तु NBFIs अब भी खुलकर नियमों का उल्लंघन कर रही है।

अत: RBI को और अधिक शक्तियाँ प्रदान करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। NBFIs अपनी आय के स्रोतों, गैर-आवर्ती आय एवं न लौटाएँ जाने वाले ऋणों के सम्बन्ध में पारदर्शिता नहीं अपनाती है। इसी प्रकार RBI अधिनियम में NBFIs को जमाकर्त्ताओं की पूंजी लौटाने के लिए बाध्य करने का कोई प्रावधान नहीं है। अत: इन संस्थाओं पर और अधिक नियन्त्रण की आवश्यकता है।।

**5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings) :**

1. भारतीय वित्तीय प्रणाली — कुलदीप गुप्ता एवं डॉ. राजकुमार।
2. भारतीय वित्तीय प्रणाली — टी. आर. जैन एवं ओ. पी. खन्ना।

**Paper : BC - 206 (i) Indian Financial System** **Revised by : M.L. Singla**

**Lesson No. : 10**

## RESERVE BANK OF INDIA : FUNCTIONS, REGULATIONS AND CONTROL OF CREDIT, MONETARY POLICY

**विषय-सामग्री (Contents)**

1. परिचय (Introduction)
2. उद्देश्य (Objective)
3. प्रस्तुतिकरण (Presentation)
   - 3.1 रिजर्व बैंक के कार्य (Functions of Reserve Bank of India)
   - 3.2 साख नियन्त्रण (Credit Control and Regulations)
     - 3.2.1 परिभाषात्मक साख नियन्त्रण (Quantitative Credit Control)
     - 3.2.2 चयनात्मक साख नियन्त्रण (Selective Credit Control)
   - 3.3 मौद्रिक नीति (Monetary Policy)
     - 3.3.1 मौद्रिक नीति के उद्देश्य (Objective of Monetary Policy)
     - 3.3.2 रिजर्व बैंक की नई मौद्रिक नीति (New Montary Policy of Reserve Bank of India)
     - 3.3.3 रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति की विशेषताएँ (Features of Reserve Banking Monetary Policy)
     - 3.3.4 मौद्रिक नीति की सीमाएँ (Limitations of Monetary Policy)
     - 3.3.5 मौद्रिक नीति में सुधार के लिए सुझाव (Suggestions for Improved Functioning of Monetary Policy)
4. सारांश (Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)
6. नमूने के प्रश्न (Self-Assessment Questions)

**(4) प्राकृतिक प्रकोप या कारण :**

कई प्राकृतिक आपदाएँ भी इसका कारण बनती हैं। जैसे वर्षा का न होना, वर्षा का आवश्यकता से अधिक होना, फैक्टरी में आग लग जाना, हड़ताल या तालाबन्दी आदि। ऐसे प्राकृतिक प्रकोप से बैंक का आय प्राप्त करना तो दूर, उसकी राशि भी डूब जाती है।

**(5) राजनीतिक दबाव :**

अनेक बार बैंकों को राजनीतिक प्रभावों तथा उधार लेने वालों के जोड़-तोड़ के फलस्वरूप अग्रिम ऋण देने पड़ते हैं। लेकिन वापसी के दौरान इस तरह के ऋणों को वसूल करना कठिन होता है। पिछले कई वर्षों से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को मजबूर किया गया कि वे ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण बांटे, इसके अन्तर्गत ऋण तो दिये गये जिसकी न तो ज्यादा जरूरत थी और न ही उस ऋण को लौटाने की उनमें क्षमता थी। अत: यह डूबते ऋण में परिवर्तित होते गए।

**(6) व्यापक शाखा विस्तार :**

सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में पिछले वर्षों में अपनी शाखाओं का बहुत विस्तार किया है। उसका मुख्य उद्देश्य छोटे कस्बों, ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों को पर्याप्त बैंकिंग सुविधाएँ देना था। इनके लिए भूमि खरीदी गई, भवन निर्माण हुए, अन्य इन्तजाम किए गए। इस विस्तारित शाखाओं में से अधिकतर शाखाएँ अनार्थिक सिद्ध हुई परन्तु इन पर होने वाला खर्च निरन्तर जारी रहा। जिसमें बैंकों की गैर-निष्पादक सम्पत्तियों पर असर पड़ा।

**(7) प्रबन्धक संचालकों पर वरिष्ठ अधिकारियों का दबाव :**

बैंकिंग क्षेत्र की विभिन्न शाखाओं के प्रबन्धकों पर अपने अधिकारियों का दबाव रहता है कि ज्यादा से ज्यादा ऋण वितरित किए जाए। प्रबन्धक उस दबाव के कारण ऋण तो वितरित करते हैं, परन्तु वसूली पर होने वाली कठिनाई के कारण वसूली दर अधिक नहीं हो पाती।

**(8) बाजार में प्रतिस्पर्धा का बढ़ते जाना :**

बाजार में निजी बैंकों तथा विदेशी बैंकों से प्रतिस्पर्धा के कारण कई बार बैंक अनुत्पादक कार्यों के लिए ऋण देना शुरू करते हैं। यह भी एक कारण है जिससे ऋण में उत्पादकता का न होना वसूली में दिक्कत पेश करता है।

अत: उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि बैंक की गैर-निष्पादक परिसम्पत्तियों के बढ़ने के अनेक कारण है। इनमें से कई कारण तो स्वयं निर्मित है परन्तु अधिकांश कारण परिस्थियों की विवशता से जुड़े हुए है। इन कारणों से बैंकों की गैर-निष्पादित परिसम्पत्तियों में काफी वृद्धि हो चुकी है। (देखे तालिका)।

### 3.5.2 समस्या के समाधान के लिए उपाय (Measures for the Solution of the Problem) :

बैंकों की गैर-निष्पादक सम्पत्तियों के समाधान के लिए विभिन्न उपायों का तीन वर्गों में विभाजन किया जा सकता है:

(a) निरोधक उपाय, (b) उपचारात्मक उपाय, (c) सख्त उपाय।

**(A) निवारक उपाय :**

1. **वसूली :** इसके अन्तर्गत बैंक अधिकारियों को सुन्योजित ढंग से वसूली करनी चाहिए। पूरे आंकड़ें एकत्रित करने के पश्चात् सरकारी नियमों के अन्तर्गत वसूली कार्यक्रम तेज किए जाने चाहिए। यदि सम्भव हो तो वसूली कैम्प भी लगाए जा सकते है जिसमें सरकारी अफसर भी शामिल किए जाने चाहिए। दोषियों के प्रति केस की कार्यवाही को बढ़ाया जाना चाहिए। गाँव में भी इस तरह के वसूली प्रोग्राम चलाए जा सकते हैं। शाखाओं को इस वसूली प्रोग्राम के लिए लक्ष्य भी दिए जा सकते हैं।

2. **साख समीक्षा तथा प्रबन्ध :** अधिकांश बैंकों की साख समीक्षा एवं प्रबन्ध कार्यक्रम में बहुत सी कमियाँ है। इन कमियों को दूर करने के लिए बैंक प्रबन्धन को आवश्यक कदम उठाने चाहिए। इसके अन्तर्गत ऋणी का उचित चयन अति-आवश्यक है। उत्पादक कार्यों हेतु ऋण अधिक दिए जाने चाहिए। प्रत्येक ऋण का उचित अनुसरण आवश्यक रूप से किया जाना चाहिए। ऋण की वसूली के आवश्यक इन्तजाम किए जाने चाहिए। समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अपनाकर बैंकों को अपने साख की समीक्षा करनी चाहिए।

**(B) उपचारात्मक उपाय :**

उपचारात्मक उपायों के अन्तर्गत एक महत्त्वपूर्ण कदम ऋणी की वासी के क्रम को निर्धारित करना हो सकता है। अर्थात् ऋण की राशि तथा वापसी के कार्यक्रम को सन्तुलित रूप से तय किया जाना चाहिए। ऐसा करने से ऋण की वसूली दर में वृद्धि हो सकती है। ऐसे ऋण जिनको वूसल करने में समस्याएँ आ रही हैं या तो उस अवस्था में ऋणी के साथ समझौता बातचीत करके एक करार किया जा सकता है जिसके अन्तर्गत उसे कुछ छुट देकर ऋण वापिस करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। बैंकों का प्रयास होना चाहिए कि न्यूनतम खर्ची पर देय राशि।

**(3) साख नियंत्रण**

केन्द्रीय बैक साख नियन्त्रण के कार्य में विभिन्न परम्परागत विषियों से सहायता करता है। जिन्हें सीधे बतलाया गया है।

| **परम्परागत अथवा परिमाणात्मक** | **चयनात्मक अथवा गुणात्मक** |
|---|---|
| 1. बैंक दर में परिवर्तन | 1. मार्जिन आवश्यकताओं में परिवर्तन |
| 2. खुले बाजार की क्रियाएँ | 2. ब्याज दरों एवं जमानत आवश्यकताओं में परिवर्तन |
| 3. परिवर्तनशील कोष अनुपात | 3. उपभोगता साख का नियंत्रण |
| | 4. साख की सीमायें निर्धारित करना। |
| | 5. नैतिक उपाय आदि। |

**(4) नकद कोषों का संरक्षक**

यह बैंक व्यापारिक बैंकों की कुल जमा का एक निश्चित भाग जमानत के रूप में अपने पास संग्रह रखता है और कोष राशियों की आवश्यकता में परिवर्तन के माध्यम से साख नियंत्रण का कार्य करता है। ये कोष राशियाँ बैंकिंग प्रणाली की तरलता का प्रतिनिधित्व करती है। इन कोषों पर केन्द्रीय बैक को ब्याज नहीं चुकाना पड़ता। इनको विभिन्न आर्थिक विकास उद्देश्यों के लिये प्रयुक्त किया जाता है।

इन कोष राशियों के माध्यम से व्यापारिक बैंकों के खातों का संचालन किया जाता है और बैंकिंग प्रणाली में अनुशासन स्थापित करने में सहायता मिलती है।

**(5) अंतिम ऋणदाता**

न केवल सिद्धान्त में अपितु व्यवहार में भी केन्द्रीय बैंक ने संकट के समय अन्य बैंकों को सहायता प्रदान की है। बैक में कोई संकट खराब ऋण क्रियाओं से उत्पन्न होता है जो किसी विशेष बैंक में आता है अथवा अर्थव्यवस्था में सामान्य मंदी का संकट भी उत्पन्न होता है। एक केन्द्रीय बैंक जिसके पास व्यापारिक बैंकों, केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारें और स्वयं नोट जारी करने के एकाधिकार के कारण इसके पास पर्याप्त साधन होते है। जिनके बल पर एक केन्द्रीय बैक अन्तिम ऋणदाता की भूमिका निभा सकता है। अत: संकट के समय बैंक केन्द्रीय बैंक से आशा की उम्मीद कर सकते हैं।

**(6) समाशोधन गृह निपटारा व्यवस्था और हस्तांतरण :**

अपनी एक विशेष स्थिति जिसमें यह बैंक आंतरिक एवं विदेशी कोषों का काम देखता है। यह समाशोधन गृह का कार्य अच्छी प्रकार से कर सकता है। इसी प्रकार अन्तर बैंक हस्तांतरण और लेखों का निपटारा करवा सकता है। हाँ, इसकी शाखाएँ सभी स्थानों पर नहीं होती हैं। उस समय यह कार्य बड़े बैंकों को सौंप देता है। जैसे स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया को इसके लिए एजेन्सी कमीशन प्रदान कर देता है। केन्द्रीय बैंक सदस्य बैंकों का हस्तांतरण नि:शुल्क करवाता है। इसके लिए मुद्रा की तिजोरियाँ क्षेत्रीय कार्यालयों में रखी जाती हैं जिससे अल्पकालीन मांग पर मुद्रा का प्रबन्ध हो सके।

**(7) विनिमय नियन्त्रण कार्य (Regulation of the Foreign Exchange)**

भारतीय रूपये की विदेशी मुद्राओं में विनिमय दर को स्थिर रखने के लिए रिजर्व बैंक निश्चित दरों पर विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय करता रहता है। पहले यह क्रय-विक्रय स्अलिंग के माध्यम से होता था। परन्तु आजादी के बाद भारत अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) का सदस्य बन गया। अत: अब विदेशी मुद्रा का लेन-देन अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के माध्यम से होने लगा है। अब रिजर्व बैंक सभी देशों की मुद्राओं का क्रय-विक्रय करता है।

**(8) शोध एवं विकास**

अनुसंधान एवं विकास के कार्य केन्द्रीय बैंक नीति निर्माता एवं सरकार के परामर्शदाता के रूप में अपने कार्यों के उपकार्य के रूप में कार्य करता है जैसे—वित्तीय सूचनाओं का प्रसार, गृह का कार्य, देश एवं विदेश के लिए करता है। इन सुविधाओं के अभाव में इसके लिए अर्थव्यवस्था में क्रियाशील शक्तियों का पता न लगने से नियंत्रण कार्य संभालना कठिन हो जाएगा। अपने शोध विभाग की सहायता से यह बैंक विभिन्न विषयों पर शोध करवाता है। जो इनके लिए नीति निर्माण कार्यों की दृष्टि से महत्त्व रखते हैं।

यह विशिष्ट क्षेत्रों जैसे—कृषि और निर्यात क्षेत्र को सहायता देता है तथा इनकी समस्याओं को समझने तथा हल करने के लिए अपने अलग से प्रकोष्ठ एवं विभागों का संचालन करता है। कृषि का वित्त प्रबन्ध उद्योग, एवं निर्यात व्यापार को सहायता के लिए केन्द्रीय बैंकों की कुछ सहायक एजेन्सियाँ भी होती हैं जैसे कृषि पुनर्वित्त निगम, भारत का औद्योगिक विकास बैंक और निर्यात साख एवं गारंटी निगम (ECGC) इत्यादि।

**साधारण बैंकिंग के कार्य (General Banking Functions)**

**(9) जमा स्वीकार करना (To accept Deposits)**

रिजर्व बैंक केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, पोर्ट ट्रस्ट एवं निजी व्यक्तियों के जमा रूपयों को स्वीकार करने के लिए तैयार रहता है। परन्तु इनकी जमा राशि पर रिजर्व बैंक कुछ भी ब्याज नहीं देता।

**(10) मूल्यवान धातुओं का क्रय-विक्रय (To Deal in Costly Metals) :**

रिजर्व बैंक सोने तथा चांदी के सिक्कों तथा सोना-चांदी का क्रय-विक्रय करता है।

**(11) अन्य देशों के बैंकों से व्यवहार (To deal with the Banks of the other Countries)**

रिजर्व बैंक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) का सदस्य होने के नाते अन्य सदस्यों के केन्द्रीय बैंकों के साथ खाता खोल सकता है। उनसे एजेन्सी सम्बन्ध बना सकता है। उनके एजेन्ट के रूप में काम कर सकता है तथा (IMF) से लेन-देन कर सकता है।

**(12) बिलों का क्रय-विक्रय (To Deal in Bills)**

भारतीय रिजर्व बैंक भारत में लिख गए व्यापारिक बिलों, प्रतिज्ञा पत्रों एवं हुण्डियों के क्रय-विक्रय तथा पुन: कटौती का कार्य करता है। बशर्ते कि ये बिल 90 दिन से अधिक अवधि के न हों और इनका भुगतान भारत में ही होना चाहिए।

**(13) ऋण देना (Lending of Money)**

केन्द्रीय बैंक होने के नाते रिजर्व बैंक स्वीकृत प्रतिभूतियों, बैंकों के ऋणपत्रों एवं सोने-चांदी की जमानत पर सरकार तथा बैंकों को 90 दिन तक की अवधि के ऋण देता है।

**(14) ऋण लेना (Taking of Money)**

आवश्यकता पड़ने पर रिजर्व बैंक-किसी भी अनुसूचित बैक या केन्द्रीय बैंक से सम्पत्ति की जमानत पर ऋण ले सकता है। परन्तु ये ऋण रिजर्व बैंक की कुल पूंजी से अधिक नहीं होने चाहिए और ऋण की भुगतान करने की अवधि 30 दिन से ज्यादा की नहीं होनी चाहिए।

**(15) कृषि वित्त व्यवस्था का विकास (Production of Agricultural Finance)**

रिजर्व बैंक में आरम्भ से ही कृषि साख विभाग की स्थापना की गई है। इस विभाग का मुख्य कार्य साख से सम्बन्धित समस्याओं के बारे में अनुसंधान करना है। इसके अतिरिक्त यह विभाग कृषि का विकास करने के लिए भारत सरकार, राज्य सरकारों एवं राज्य सहकारी बैंकों को समय-समय पर सलाह भी देता है। यह विभाग भारत सरकार तथा राज्य सरकारों को देश के विभिन्न क्षेत्रों में गोदामों की स्थापना में भी सहयोग प्रदान करता है। ग्रामीण साख के क्षेत्र में रिजर्व बैंक का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

**(16) विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना (Establishment of Specialised Institutions)**

रिजर्व बैंक ने औद्योगिक वित्त से सम्बन्धित कई संस्थाओं की स्थापना में सहायता दी है। स्वतन्त्रता के बाद रिजर्व बैंक के सहयोग से भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (Industrial Finance Corporation of India), भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (Industrial Development Bank of India), राज्य वित्त निगम (State Finance Corporation) तथा औद्योगिक साख व विनियोग निगम (Industrial Credit and

Investment Corportion), भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (Small Industries Development Bank of India) आदि विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना की गई है।

**(17) निर्यात व्यापार का विकास (Promotion of Export Trade) :**

भारतीय रिजर्व बैंक ने विदेशी व्यापार को प्रोत्साहन देने के लिए कई उपाय किए है।

**I. विशेष स्कीमें (Special Scheme)**

निर्यात व्यापार के लिये अधिक मात्रा में साख प्रदान करने के लिए रिजर्व बैक व्यापारिक बैंकों को प्रोत्साहित करता है। इनके व्यापार निर्मित के लिए दी जाने वाली साख के पुनर्वित की विशेष सुविधायें रिजर्व बैंक द्वारा प्रदान की जाती है। रिजर्व बैंक ने समय-समय पर विदेशी व्यापार की उचित व्यवस्था करने के लिए कई योजनाएँ लागू की है। जैसे (i) निर्यात विल साख योजना (ii) प्रीशिपमेट साख व्यवस्था (iii) कर वापसी साख योजना (iv) विदेशी (Duty, Draw back Credit Scheme) व्यापार के लिये ब्याज की कम दर पर ऋणों की व्यवस्था।

**II. भारतीय निर्यात आयात बैंक (Export Import Bank of India) :**

1 जनवरी 1982 को रिजर्व बैक की सहायता से भारतीय निर्यात आयात बैंक (Export Import Bank of India) की स्थापना की गई है। यह बैंक निर्यात आयात व्यापार को साख की सुविधाएँ प्रदान करता है।

**(17) बैंकिंग का प्रशिक्षण (Training in Banking)**

रिजर्व बैंकिग क्षेत्र के लिये योग्य तथा कुशल कर्मियों की पूर्ति के उद्देश्य से उनके प्रशिक्षण के लिए कई संस्थाओं की स्थापना की गई है। इनमें से मुख्य संस्थाएँ है:

(i) मुम्बई में बैंकर्स ट्रेनिंग कालेज (Banker Training College)

(ii) कृषि बैंकिंग कालेज (College of Agriculture Banking)

(iii) स्टाफ ट्रेनिंग कालेज (Staff Training College)

(iv) इन्दिरा गांधी इन्सटीच्यूट फार डेवलपमेन्ट रिसर्च (Indira Gandhi Institute for Development Research) आदि।

**रिजर्व बैंक के सहयोग के फलस्वरूप मुम्बई के बैंक मैनेजमैंट इन्सटीच्यूट (Institute for Bank Management) की स्थापना संभव हो सकी है।**

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि रिजर्व बैंक देश के विकास तथा बचत और बैंकिंग आयातों को विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। देश के विकास की दर को तीव्र करने के लिए बैंक कई प्रकार के विकासात्मक कार्य करता है।

**3.2 साख नियन्त्रण (Regulations and Credit Control)**

रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण के उन सभी उपायों को प्रयोग करता है जिनका संसार के दूसरे बैंक करते है। रिजर्व बैंक द्वारा अपनाए गए साख नियन्त्रण के तरीकों का अध्ययन दो भागों में किया जायेगा।

### 3.2.1 परिमाणात्मक साख नियन्त्रण (Quantitative Credit Control)

### (2) चयनात्मक साख नियन्त्रण (Selective Credit Control)

### 1. परिमाणात्मक साख नियन्त्रण

रिजर्व बैंक के कुल परिणाम पत्र नियन्त्रण रखने के लिये इन उपायों का प्रयोग करता है जिनका संसार के दूसरे केन्द्रीय बैंक करते है। रिजर्व बैंक निम्नलिखित उपायों द्वारा साख के कुल परिमाण पर नियन्त्रण करता है।

#### (a) बैंक दर (Bank Rate)

बैंक दर से अभिप्राय ब्याज की उस दर से है जिस पर रिजर्व बैंक अन्य बैंकों को ऋण देता है। रिजर्व बैंक ने 4 अप्रैल 1935 को बैंक दर 3.5 प्रतिशत निर्धारित की थी। नवम्बर 1935 में उसे कम करके 3 प्रतिशत कर दिया गया। 14 नवम्बर 1951 तक बैंक दर 3 प्रतिशत ही रही। सन् 1951 तक रिजर्व बैंक ने दर का प्रयोग मौद्रिक नीति के उपाय के रूप में नहीं किया। इस अवधि में रिजर्व बैंक ने सस्ती मुद्रा नीति (Cheap Money Policy) को अपनाया। इसके फलस्वरूप मुद्रा की पूर्ति तथा साख का बहुत अधिक विस्तार हुआ। इससे व्यापारिक क्षेत्रों मे सट्टेबाजी को प्रोत्साहन मिला तथा भुगतान सन्तुलन के घाटे में भी वृद्धि हुई।

भारत में 1964 तक सस्ती मुद्रा नीति अपनाई थी परन्तु 1964 के बाद महँगी मुद्रा नीति (Dear Money Policy) को अपनाया गया। अब दोबारा सस्ती मुद्रा नीति को अपनाया गया है। भारत में बैंक दर नीति का प्रयोग कीमतों में होने वाली वृद्धि को रोकने के लिए नहीं हो सका है। सर रामाराव के अनुसार बैंक दर में वृद्धि का उद्देश्य केवल चेतावनी की सूचना देना मात्र रहा है। भारत की परिस्थितियों में मुझे संदेह है कि बैंक दर में थोड़ी-सी वृद्धि स्फीति की स्थिति पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव पडेगा।

#### (b) खुले बाजार की क्रियाएँ (Open Market Operations)

रिजर्व बैंक को यह अधिकार दिया गया कि वह मौद्रिक नीति के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए प्रथम श्रेणी की प्रतिभूतियों के क्रय विक्रय कर सकता है। रिजर्व बैंक की खुले बाजार की क्रियाएं मुख्य रूप से सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय विक्रय से संबंधित रहती हैं। सन् 1951 तक देश में व्यापारिक बैंक रिजर्व बैंक को असीमित मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियाँ बेचकर नकदी प्राप्त किया करते थे। इसके आधार पर वे साख का प्रसार करते थे। परन्तु नवम्बर 1951 में रिजर्व बैंक इन प्रतिभूतियों को खरीदने के बजाए इन पर ऋण देने लगा है। यह नीति 1956 तक जारी रही। मौद्रिक नीति के इस उपाय के फलस्वरूप भारतीय रिजर्व बैंक का बैंकिंग संस्थाओं पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण हो गया। 1962 के बाद खुले बाजार की क्रियाओं का उद्देश्य मुख्यत: मुद्रा स्फीति को कम करना रहा है।

**(c) विभेदीकृत ब्याज की दरें (Differential Rates of Interest) :** अक्टूबर 1960 में मौद्रिक नीति की एक नई तकनीक विभेदीकृत ब्याज दरें अपनाई हैं। इसके अंतर्गत रिजर्व बैंक ने प्रत्येक बैंक को दिए जाने वाले ऋण का एक कोटा निश्चित कर दिया है। यदि कोई बैंक उस कोटे की राशि से अधिक ऋण लेता है तो उसकी बैक दर से अधिक ब्याज दर पर ऋण दिया जायेगा। 24 सितम्बर 1964 को कोटा प्रणाली को समाप्त कर दिया गया है। अब रिजर्व बैंक से लिए गए ऋणों पर ब्याज की दर का निर्धारण बैंक तरलता स्थिति पर किया जाने लगा अर्थात् तरलता अनुपात कम होने पर ब्याज दर बैंक दर से ज्यादा हो जायेगी।

**(d) प्रत्यक्ष कार्यवाही (Direct Action)**

बैंकिंग अधिनियम 1949 के अनुसार रिजर्व बैंक अन्य बैंकों के किसी भी प्रकार के लेन-देन को रोक सकता है तथा जो बैंक रिजर्व बैक की साख नीति के अनुसार कार्य नहीं करता उसके विरुद्ध प्रत्यक्ष कार्यवाही कर सकता है। उस बैक को रूपया देना बन्द कर सकता है और किसी बैक की स्थिति ज्यादा खराब होने की स्थिति में उस बैंक को बन्द करने की सिफारिश भी कर सकता है।

**(e) परिवर्तनशील नकद कोषों का अनुपात (Variable Cash Reserve Ratio)**

रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण के लिए बैंकों की नकद जमा राशि पर नियन्त्रण रखता है। आरम्भ में सभी अनुसूचित बैंकों को अपनी चालू जमाओं (Current Depoists) और मुद्दती जमाओं (Time Deposits) को क्रमशः 5% तथा 2% रिजर्व बैंक के पास जमा करना पड़ता था। परन्तु अप्रैल 2002 में इसे कम करके 4.75% कर दिया गया।

**(f) वैधानिक तरल कोषानुपात (Statutory Liquidity Ratio)**

प्रत्येक बैंक को अपनी कुल जमा का कम से कम 20% वैधानिक तरल कोषानुपात अपने पास रखना पड़ता था। 1981 में 35% अक्टूबर 1993 में इसे 34.75 तथा 1997 में इसे कम करके 25% कर दिया गया। इसका प्रयोग मुद्रा स्फीति को रोकने के लिए किया जाता है।

**(g) नैतिक प्रभाव (Moral Personation)**

रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण के उपरोक्त उपायों को लागू करने के साथ-साथ बैंकों पर समय-समय पर नैतिक प्रभाव डालकर और उन्हें समझा बुझाकर भी साख नियन्त्रण का कार्य करता है। रिजर्व बैंक समय-समय पर वाणिज्यिक बैंकों को लघु उद्योगों एवं कृषि क्षेत्र को उदारतापूर्वक ऋण देने की सलाह देता है। परन्तु साख को नियन्त्रण में रखने की सलाह भी देता है। वह इसके साथ-साथ वाणिज्यिक बैंकों को लघु उद्योगों एवं कृषि क्षेत्र को उदारतापूर्वक ऋण देने की सलाह देता है। परन्तु साख को नियन्त्रण में रखने की सलाह भी देता है। वह इसके साथ-साथ वाणिज्यिक बैंकों को अपने तरलता कोषों को बढ़ाने के लिए सरकारी प्रतिभूतियों में अधिक निवेश करने की सलाह भी देता है। रिजर्व बैंक की सलाह न मानने पर वह वाणिज्यिक बैंकों के विरुद्ध प्रत्यक्ष कार्यवाही भी कर सकता है।

**3.2.2 चयनात्मक साख नियन्त्रण (Selective Credit Control)**

चयनात्मक साख नियंत्रण से अभिप्राय उस साख नियन्त्रण से है जिसके अन्तर्गत केवल कुछ निश्चित उद्देश्यों के लिए दी जाने वाली साख पर नियन्त्रण किया जाता है। उदाहरण के लिए यदि देश में चावल के दाम बढ़ रहे हैं और सरकार उन्हें रोकना चाहती है तो इस अवस्था में रिजर्व बैंक देश के बैंकों को यह आदेश दे सकता है कि वे चावल की जमानत पर रुपया उधार न दे। ऐसा करने से व्यापारियों को चावल खरीदने के लिए रुपया उधार नहीं मिलेगा और वे अधिक चावल नहीं खरीद सकेंगे। इस प्रकार चावल के दाम कम हो जायेंगे। क्योंकि साख नियन्त्रण का यह प्रभाव एक ही वस्तु अर्थात् चावल पर ही पड़ा है। इसलिए इसे चयनात्मक साख नियन्त्रण कहते हैं। चयनात्मक साख नियन्त्रण के लिए रिजर्व बैंक ने निम्नलिखित तरीके अपनाएं हैं।

**(a) साख की राशनिंग (Rationing of the Credit) :** रिजर्व बैंक ने साख पर नियन्त्रण करने के लिए साख की राशनिंग का तरीका भी अपनाया। इसके अनुसार रिजर्व बैंक यह तय कर देता है कि किसी बैंक को अधिक से अधिक कितनी साख मिल सकेगी अथवा कोई बैंक अधिक से अधिक कितने रुपयों के बिलों का भुगतान कर सकेगा।

**(b) ऋणों की अधिकतम सीमा (Maximum Limit of the Credit) :** रिजर्व बैंक ने सट्टा प्रवृत्ति को रोकने के लिए ऋणों की अधिकतम सीमा भी निश्चित कर दी। अनुसूचित बैंक किसी एक ऋणी को एक करोड़ रुपये की राशि से अधिक ऋण नहीं दे सकते और ऐसा करने से पूर्व ऋणदाता बैंक के लिए रिजर्व बैंक की अनुमति प्राप्त करना आवश्यक था अब ये प्रतिबंध समाप्त कर दिये गए हैं।

**(c) मार्जिन आवश्यकतायें (Margin Requirements) :** प्रतिभूति के मूल्य एवं प्रतिभूति के आधार पर लिये गए ऋण के अन्तर को मार्जिन के अर्थ के रूप में लिया जाता है। केन्द्रीय बैंक सामान्यतः साख के विभिन्न उपयोगों के लिए मार्जिन आवश्यकताओं को निर्धारित करने के लिए अधिकृत होती है। इन सीमाओं का पालन बैंकों को अनिवार्य रूप में करना होता है। सीमान्त आवश्यकतायें ऋण प्रदान करने वाले को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है किन्तु उधार लेने वाले के लिए भी अंकुश का काम करती हैं और साख की मात्रा को कम करती हैं। विभिन्न प्रकार के उपयोगों के लिए भिन्न-भिन्न मार्जिन आवश्यकताओं को निर्धारित करके केन्द्रीय बैंक साख को अधिक आवश्यक उपयोगों के लिए निर्धारित कर सकता है।

**लाइसेंसिंग** रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया क्षेत्रीय आवश्यकता को संभालने की दृष्टि से उपयुक्त लाइसेंसिंग नीति निर्धारित करता है। संयोग से यह विधि क्षेत्रीय विकास के लिए भी उपयुक्त कार्य करती है।

### 3.3 मौद्रिक नीति (Monetary Policy)

मौद्रिक सिद्धान्त का सम्बन्ध मुद्रा की मात्रा का आर्थिक प्रणाली पर प्रभाव की व्याख्या तक सीमित होता है जबकि मौद्रिक नीति का सम्बन्ध राज्य के द्वारा अपने केंद्रीय बैंक के माध्यम से राज्य की सामान्य आर्थिक नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करने के मुद्रा की पूर्ति का नियंत्रण करवाना है। यह नीति मुद्रा की वृद्धि की हानियों को न्यूनतम करने के साथ मौद्रिक प्रणाली के क्रियात्मक एवं अस्तित्व के लाभों को अधिकतम बिन्दु तक ले जाने के प्रयत्न करती है।

#### 3.3.1 मौद्रिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Monetary Policy)

**मौद्रिक नीति के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—**

**(a) उपयुक्त कीमत प्रणाली**—एक मौद्रिक अधिकारी के सामने तीन विकल्प होते हैं—

(अ) कीमत स्तर में स्थिरता की प्रणाली

(ब) कीमत में धीमी गति से वृद्धि प्रणाली

(स) कीमतों में गिरावट की प्रणाली

(अ) स्थिर कीमतों को मुद्रा स्फीति एवं मुद्रा संकुचन के बुरे प्रभावों से बचने के लिए अच्छा माना जाता है। अन्य बातों के समान रहने पर स्थिर कीमतें स्थिर विनिमय दरों को संभव बनाती हैं। स्थिर कीमतों की धारणा के अन्तर्गत मुद्रा तटस्थ हो जाती है। अर्थात् मुद्रा की पूर्ति अपरिवर्तनीय रहती है जो कि मौद्रिक आयों के माध्यम से कीमतों में परिवर्तन ला सकती है। किन्तु एक पूर्णतः तटस्थ नीति कीमत स्थिरता में सहायक नहीं हो पाती जबकि प्राकृतिक कारणों से उत्पादन में व्यापक उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। इसलिए एक रचनात्मक एवं स्थिर कीमत नीति वह होती है जो अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुसार मुद्रा की पूर्ति में परिवर्तन की छूट प्रदान करती है।

(ब) शुद्ध वितरणात्मक दृष्टिकोण से स्थिर कीमतों को वांछनीय समझा जाता है किन्तु धीमी दर से बढ़ने वाली कीमतों को उत्पादन के दृष्टिकोण से उचित समझा जाता है। कीमतों में थोड़ी वृद्धि से

विनियोग में सहायता मिली है। रोजगार एवं उत्पादन को भी प्रेरणा प्राप्त होती है जब कीमतों की तुलना में मजदूरी कम हो जाती है तब उत्पादन के विस्तार के कारण रोजगार की मात्रा में वृद्धि होगी।

(स) कीमतों में स्फीतिकारी प्रवृत्तियों को रोकने के लिए कीमतों को नीचे लाने की नीति का पालन किया जाता है। इस विधि में एक ही दोष है कि इससे रोजगार की मात्रा में कमी हो सकती है और यह आर्थिक मन्दी के बीज बो सकती है।

**पूर्ण रोजगार की स्थिति की प्राप्ति**

इन दिनों सबसे अधिक उपयुक्त नीति मुद्रा प्रसार के बिना पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त करना है। कीमत एवं विनिमय स्थिरता के लक्ष्य को गौंण स्थान दिया जाता है। पूर्ण रोजगार की नीति का पालन मौद्रिक उपायों से किया जाता है। क्योंकि वे उपाय बचत एवं विनियोग को उस स्तर पर स्थापित करते हैं। जहाँ पूर्ण रोजगार का लक्ष्य प्राप्त हो जाता है।

**सस्ती एवं महँगी मुद्रा नीति**

मौद्रिक नीति को सस्ती मुद्रा नीति उस समय कहा जाता है जब मुद्रा की पूर्ति कम ब्याज की दरों पर की जाती हो। इस प्रकार महँगी मुद्रा नीति उस समय सस्ती मानी जाती है तब मुद्रा की पूर्ति कठिनाई के साथ होती है और उस पर ऊँची दर पर ब्याज लगाया जाता हो। मंदी तथा संकुचन के समय में सस्ती मुद्रा की नीति का प्रयोग किया जाता है। सस्ती मुद्रा के लिए भी एक समय होता है और महँगी मुद्रा के लिए भी एक समय होता है। यह तो व्यवसायिक क्रिया कलाप में प्रमुख प्रवृत्ति पर निर्भर करता है। सस्ती अथवा महँगी कौन सी मुद्रा नीति का पालन किया जाए इसका निर्णय करते समय विदेशों की स्थिति का ध्यान रखना भी आवश्यक होता है।

### 3.2.2 रिजर्व बैंक की नई मौद्रिक नीति (2000-2001) (New Monetary Policy of the Reserve Bank (2000-2001)

रिजर्व बैंक के गवर्नर श्री विमल जलान ने नई मौद्रिक नीति की घोषणा अप्रैल 2000 में की। इस नीति का मुख्य उद्देश्य विकास के लिए पर्याप्त साख उपलब्ध करना है। परन्तु साथ में यह भी ध्यान में रखना है कि इसके फलस्वरूप देश में मुद्रा स्फीति के दबाव में वृद्धि न हो।

नई मौद्रिक नीति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

**(1)** **बैंकों का बीमा व्यापार में निवेश (Bank's Entry into Insurance Business) :** बीमा व्यापार में बैंकों के प्रवेश सम्बन्धी शर्तों की घोषणा कर दी गई है। बैंकों को बीमा व्यापार में प्रवेश करने के लिए रिजर्व बैंकों की पुन: अनुमति लेनी पड़ती है वे बैंक ही बीमा व्यापार कर सकते हैं। जिनको न्यूनतम शुद्ध परिसम्पत्ति 500 करोड़ रुपये होगी।

**(2)** **स्वर्ण जमा योजना (Gold Deposits Scheme) :** बैंकों को इस बात की सुविधा दे दी गई है कि स्वर्ण जमा योजना के अंतर्गत जो उनके पास सोना जमा हुआ है उसे वे दूसरे मनोनीत बैंकों को उधार दे सकते हैं।

**(3)** **ब्याज दर नीति (Interest Rate Policy) :** नई मौद्रिक नीति में बैंकों की ब्याज दर नीति को अधिक लचीला बना दिया गया है। बैंकों को स्थिर या परिवर्तनशील (Fixed of Floating) ब्याज की दर पर ऋण देने की स्वतंत्रता होगी।

**(4) तकनीकी विकास (Technological Development) :** बैंकिंग का तकनीकी विकास अधिक तेजी से किया जाएगा। भारतीय वित्तीय नेटवर्क (Indian Financial Network-IFINET) देश के 100 महत्त्वपूर्ण केन्द्रों को कवर करेगा। बैंकों को कम्प्यूटरीकरण (Computerisation) तेजी से किया जाएगा।

**(5) साख सुपुर्दगी प्रणाली (Credit Delivery Mechanism) :** बैंकों को कृषि लघु उद्योगों आदि क्षेत्रों को साख प्रदान करने की व्यवस्था में सुधार करना चाहिए। (a) सूखा ग्रस्त क्षेत्रों में अल्पकालीन ऋणों को मध्यकालीन ऋणों में बदल दिया जाएगा। (b) अति लघु उद्योगों (Tiny Industries) की ऋण सीमा को 5 लाख रुपये से बढ़ाकर 10 लाख रुपये कर दिया गया है। (c) सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों द्वारा प्रत्येक जिले में लघु उद्योग शाखा स्थापित की जायेगी।

**(6) चलनिधि समायोजन सुविधा को पूरी तरह विभिन्न अवस्थाओं में लागू किया जाएगा। (Full Fledged Liquidity Adjustment Facility-LAF to be Introduced in Stages) :** चलनिधि समायोजन सुविधा को पूरी तरह से तीन अवस्थाओं में लागू किया जाएगा। इसका अभिप्राय है कि अन्तर बैंक मांग मुद्रा बाजार (Inter-Bank Call Money Market) में ब्याज की दरों को व्यवस्थित करने के लिए चलनिधि समायोजन सुविधा (Liquidity Adjustment Facility) के जरिये रिजर्व बैंक सहायता (समर्थन) करेगा। इसके लिए वह कभी-कभी अपनी प्रतिभूतियों की पुनर्खरीद (Repurchase) की दरों को भी निर्धारित करेगा।

**(7) वित्तीय बाजारों का विकास (Development of Financial Market) :** मुद्रा बाजार तथा सरकारी प्रतिभूतियों के बाजार को और अधिक विकसित करने के लिए महत्त्वपूर्ण सुधार किए जायेंगे। जैसे (I) नकद सुरक्षित अनुपात (Cash Reserve Ratio) के लिए प्रतिदिन की न्यूनतम जरूरत को 85 प्रतिशत से घटाकर 65 प्रतिशत कर दिया। (II) जमा प्रमाणपत्रों (Certificate of Deposits) की न्यूनतम परिपक्वता अवधि (Minimum Maturity Period) को कम करके 15 दिन कर दिया गया। (III) रिजर्व बैंक राज्य सरकारों की प्रतिभूतियों की पुनर्खरीद भी करेगा।

**(8) निर्यात पुनर्वित्त सुविधा का उदारीकरण (Liberalisation of Export Credit Refinance Facility) :** निर्यात पुनर्वित्त सुविधा का उदारीकरण कर दिया गया है। निर्यात पुनर्वित्त सुविधा की सीमा को 50 करोड़ रुपये कर दिया गया है। जो पहले 25 करोड़ रुपये थी।

**(9) वित्तीय संस्थाओं द्वारा संसाधनों को एकत्रित करने की प्रक्रिया आसान (Easing the Procedure for Financial Institutions to Mobilize the Resources) :** भारतीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा धन एकत्रित करने की प्रक्रिया को आसान कर दिया गया है। अब उन्हें समय जमाओं (Time Deposits) पर ब्याज दर निर्धारित करने की स्वतन्त्रता होगी। इसी प्रकार इन संस्थाओं द्वारा जारी किए जाने वाले बॉण्डस तथा अन्य साखपत्रों सम्बन्धी नियमों को भी और अधिक आसान कर दिया गया है—

**(10) विवेकपूर्ण उपाय (Prudential Measures) :** नई मौद्रिक नीति के अनुसार बैंकों के निरीक्षण एवं नियन्त्रण के लिए अधिक विवेकपूर्ण उपाय अपनाए जायेंगे। इसके लिए निम्नलिखित कदम उठाये जाएंगे—

(i) बैंकों द्वारा अपनाई जाने वाली जोखिम प्रबन्ध प्रणाली को और अधिक कुशल बनाया जाएगा।

(ii) अंशों की जमानत पर दिए जाने वाले ऋणों में अधिक पारदर्शी नियम लागू किए जायेंगे।

(iii) पूँजी पर्याप्त अनुपात (Capital Adequacy Ratio) से सम्बन्धित नियमों को और अधिक मजबूत बनाया जाएगा।

(iv) बैंक अपनी अनार्जित परिसम्पत्तियों (Non-Performing Assets-NPAs) अर्थात् डूबत ऋणों की प्राप्ति हेतु ऋण वसूली अधिकरण (Debt Recovery Tribunals) में अधिक प्रभावशाली ढंग से कोशिश करेगा।

(v) बैंकों के निरीक्षण की जोखिम आधारित प्रणाली (Risk Based Supervisions of Banks) अपनाई जाएगी। इसके लिए दूसरे देशों के अनुभव से फायदा उठाने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय परामर्शदाताओं (Reputed International Consultants) से परामर्श करेगा।

**(II) सर्वव्यापी बैंकिंग (Universal Banking) :** नई मौद्रिक नीति के अनुसार कोई भी वित्तीय संस्था रिजर्व बैंक की अनुमति लेकर अपने आप को सर्वव्यापी बैंक में परिवर्तित कर सकती है। परन्तु इसके लिए उसे बैंकों के निरीक्षण तथा विवेक पूर्ण मापदण्डों को आसान करना होगा।

संक्षेप में श्री जी. श्रीनिवासन के अनुसार, नई मौद्रिक नीति मुख्य रूप से वित्तीय क्षेत्र में सुधारों (Financial Reforms) को आगे बढ़ाने से सम्बन्धित है। इनका सम्बन्ध मुद्रा बाजार का विस्तार करना, केन्द्रीय बैंक के योगदान को पुनर्मापित करना, निरीक्षण व्यवस्था को मजबूत करना, ऋण सुपुर्दगी व्यवस्था को सुधारने तथा संस्थागत अधोसंरचना को विकसित करना है। (The new monetary policy is related to broadcasting of money market, keeping up of supervision, improving credit delivery system and fostering institutional infrastructure.—G.L. Srinivasan)

**रिजर्व बैंक की 2003-04 की नई मौद्रिक नीति (New Monetary Policy 2003-04 of RBI)**

इस मौद्रिक नीति की विशेषताएं निम्नलिखित थीं—

(i) अर्थव्यवस्था में तेजी लाने के उद्देश्य से बैंक दर व नकद आरक्षण दर में 0.25-0.25 प्रतिशत बिन्दु की कटौतियाँ की गईं। 30 अप्रैल 2003 से नई बैंक दर 6 प्रतिशत व 14 जून 2003 से नकद आरक्षण अनुपात 4.50 प्रतिशत लागू हो गई।

(ii) रेपो दर में कोई परिवर्तन नहीं किया गया इसे 5 प्रतिशत के स्तर पर ही बरकरार रखा गया। हालांकि अर्धवार्षिक समीक्षा में इसे घटाकर 4.5% कर दिया गया।

(iii) CRR में कटौती की वजह से बैंकों के पास 3000 करोड़ रुपये की अतिरिक्त तरलता ऋण उपलब्ध हो सकेगी।

(iv) 2003-04 में सफल घरेलू उत्पाद में 6 प्रतिशत वृद्धि का अनुमान।

(v) इसी अवधि में मुद्रा स्फीति की दर 5-5.5 प्रतिशत रहने का अनुमान।



(vi) शहरी सहकारी बैंकों के लिए सतर्कता प्रावधान।

### 3.3.3 रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति की विशेषताएँ (Features of Reserve Banking Monetary Policy) :

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(1) **सक्रिय नीति (Active Policy) :** 1951 से पहले रिजर्व बैंक ने भारतीय अर्थव्यवस्था का नियन्त्रित करने के लिए कोई मौद्रिक नीति नहीं अपनाई थी और भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना (1935) से 1951 तक बैंक दर 3 प्रतिशत ही रही। परन्तु 1951 से रिजर्व बैंक एक सक्रीय मौद्रिक नीति अपना रहा है और साख नियन्त्रण के सारे उपायों को लागू कर रहा है।

(2) **सभी दिशाओं में विस्तार (Over-all Expansion) :** मौद्रिक नीति के फलस्वरूप मुद्रा की पूर्ति का सभी दिशाओं में विस्तार हुआ है।

(3) **संकुचित एवं महँगी मौद्रिक नीति (Tight and Dear Monetary Policy) :** समय के अनुसार रिजर्व बैंक संकुचित या महंगी मौद्रिक नीति अपनाता है। मुद्रा स्फीति को निर्यंत्रित करने के लिए महँगी नीति अपनाई जाती है। इससे मुद्रा की पूर्ति की दर कम हो जाती है क्योंकि महंगी मौद्रिक नीति के कारण बैंक दर बढ़ जाता है जिससे वाणिज्यिक बैंकों द्वारा दिए जाने वाले ऋण की ब्याज दर में वृद्धि हो जाती है और लोग कम ऋण लेना पसंद करते हैं।

(4) **निवेश तथा बचत प्रेरक (Investment and Saving Oriented) :** निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए रिजर्व बैंक उत्पादक क्षेत्रों को उचित ब्याज दर पर उपयुक्त मात्रा में ऋण (साख) की पूर्ति करने का प्रयास करता है। इसी प्रकार बचतों को आकर्षित करने हेतु ब्याज दर को उपयुक्त स्तर पर रखने का प्रयास किया जाता है।

(5) **साख के बंटवारे में असंतुलन (Imbalance in Credit Allocation) :** रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति कृषि क्षेत्र की तुलना में औद्योगिक क्षेत्र के प्रति अधिक उधार रही है। अर्थात् कृषि क्षेत्र को उद्योगों की तुलना में कम साख प्रदान किया जाता है।

(6) **साख नियंत्रण के विभिन्न उपाय (Different Methods of Control) :** रिजर्व बैंक का उद्देश्य आर्थिक विकास एवं स्थिरता प्रदान करना है। अत: रिजर्व बैंक ने देश की साख संबंधी जटिल समस्या का समाधान करने के लिए लगभग सभी प्रकार के परिणामस्वरूप एवं गुणात्मक उपायों को समय-समय पर अपनाया है।

(7) **मौसमी परिवर्तन (Seasonal Variations) :** रिजर्व बैंक तेजी की व्यवस्था में साख की नीति को अपनाता है तो मन्दीकाल साख संकुचन का प्रयास करता है। कृषि की फसल बाजार में बिक्री के आने के समय तेजी की अवस्था शुरू हो जाती है क्योंकि इस समय कृषि की फसल का संग्रह करने के लिए साख की मांग बढ़ जाती है तथा मुद्रा का विस्तार होता है। इसके विपरीत जब ऋणों की वापसी होने लगती है तो मन्दी की अवस्था आरम्भ हो जाती है। अर्थात् साख का संकुचन होता है।

(8) **अन्य विशेषताएँ (Other Features) :** (I) मौद्रिक नीति के उपायों को राजकोषीय नीति के अनुरूप अपनाया गया है। (II) मुद्रा स्फीति की स्थिति को प्रभावपूर्ण ढंग से नियन्त्रित करने के

लिए ब्याज की दर (बैंक दर) को निरन्तर बढ़ाया जाता रहा है। (III) मौद्रिक नीति का प्रयोग देश के विभिन्न क्षेत्र के विकास हेतु साधनों के उचित बंटवारे के लिए किया जाता रहा है। यह कार्य विशेष तौर पर राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा किया गया है।

**3.3.4 मौद्रिक नीति की सीमाएं (Limitations of Monetary Policy) :** मौद्रिक नीति की कुछ गम्भीर समस्याएं हैं जिनके अन्तर्गत उनको कार्य करना पड़ता है। निम्न निष्कर्ष योग्य ठहराते हुए यू. एस. ए. के फैडरल रिजर्व प्रणाली के बोर्ड ऑफ गवर्नर्स द्वारा किया गया है।

"कीमतों पर प्रभाव डालने वाले और भी कई कारण हैं जो कि मुद्रा पूर्ति के समान ही शक्तिशाली होते हैं। कई तत्त्व अमौद्रिक प्रकृति के होते हैं। जिन्हें मौद्रिक क्रिया से नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। उनका व्यापार क्रिया पर प्रभाव मुद्रा के उपयोग की दर में वृद्धि अथवा कमी के रूप में अभिव्यक्त हो सकता है अथवा विद्यमान मुद्रा की पूर्ति के भ्रमण और पूर्ति पर भी प्रभाव डाल सकते हैं।

यह सामान्यत: स्वीकार किया जाता है कि मंदी के समय मौद्रिक अधिकरण अपने आपको पूर्णत: असमर्थ पाते हैं कि वे विनियोग की मात्रा की वृद्धि कैसे करायें, क्योंकि वे तो केवल निजी विनियोग की सुविधाएं प्रदान कर सकते हैं जो कि लाभ की प्रत्याशित दर पर निर्भर करता है।

इसी प्रकार जब ब्याज की दरें लाभ की दरों से ऊँची होती हैं तब आर्थिक क्रियाओं को निजी ऋण लेने वालों को अग्रिम प्रदान करके विस्तृत नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में सरकारी विस्तार कार्य तभी सफल हो सकता है जब अतिरिक्त मुद्रा को कम ब्याज की दरों पर अर्थव्यवस्था में उपलब्ध कराया जाए।

अर्थव्यवस्था में काले धन अस्तित्व मौद्रिक के कार्यकरण को सीमित कर देता है। काले धन का किसी प्रकार लेखा-जोखा नहीं रखा जाता क्योंकि ऋणदाता और ऋणी ही इसे गुप्त रखते हैं। परिणामस्वरूप मुद्रा की मांग तथा पूर्ति का निर्धारण मौद्रिक नीति के अनुसार नहीं हो पाता।

संक्षेप में रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति की समस्याएँ (सीमाएँ) इस प्रकार हैं—

1. आर्थिक विकास में मौद्रिक नीति का सीमित योगदान।
2. मुद्रा स्फीति की रोकथाम में सीमित योगदान।
3. भारतीय जनता में बैंकिंग आदतों की कमी।
4. भारत में अविकसित हुआ बाजार।
5. काले धन का भारतीय अर्थव्यवस्था में अस्तित्व मौद्रिक नीति के कार्यकरण को सीमित कर देता है।
6. घाटे की वित्त व्यवस्था।
7. मौद्रिक नीति का उपयुक्त प्रकार से लागू न किया जाना।

### 3.3.5 मौद्रिक नीति में सुधार के लिए सुझाव
### (Suggestion Improved Functioning of the Monetary Policy) or

### चक्रवर्ती की सिफारिशें (Recommendations of Chakarvarty Committee)

1. रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति का मुख्य उद्देश्य कीमत स्थिरता (Price Stability) होना चाहिए।
2. मौद्रिक तथा राजकोषीय नीतियों को समन्वित करने के लिए बजटिंग घाटे की धारणा को पुर्नपरिभाषित किया जाना चाहिए।
3. बैंकों को ब्याज की दर के निर्धारण की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। सीमिति के अनुसार वर्तमान समय में ब्याज की दर के व्यय के कारण साख का जो दुरुपयोग होता है उसे ब्याज की दर को लोचशील बनाकर रोका जा सकेगा।
4. भारत में मुद्रा बाजार का पुनर्गठन करके उसे अधिक कार्यकुशल बनाया जाना चाहिए।
5. प्रतिवर्ष मुद्रा की पूर्ति का वार्षिक लक्ष्य पहले से निर्धारित कर दिया जाना चाहिए।
6. देश की आर्थिक योजना की प्राथमिकताओं के अनुसार साख के क्षेत्रीय बंटवारे के संबंध में साख बजटिंग की जानी चाहिए।

भारत सरकार ने चक्रवर्ती कमेटी की इन सभी सिफारिशों को स्वीकार करके लागू किया है।

## 4. सारांश (Summary) :

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि प्रत्येक देश में मौद्रिक तथा बैंकिंग क्षेत्र में केन्द्रीय बैंक का बहुत अधिक महत्त्व है। अत: भारतीय रिजर्व बैंक भी देश की अर्थव्यवस्था के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है। रिजर्व बैंक के मुख्य उद्देश्य भारतीय रुपये की विनिमय दर में स्थिरता बनाए रखने के साथ देश में बैंकिंग व्यवस्था का समुचित विकास करना, विभिन्न क्षेत्रों जैसे औद्योगिक कृषि एवं सेवा का समुचित विकास करने हेतु उचित मौद्रिक नीति लागू करना। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए रिजर्व बैंक नोट निर्गमन करना, विनिमय दर नियन्त्रित करना, साख नियमन के कार्य करना के साथ व्यापारिक बैंकों का मार्गदर्शन करना एवं उनकी क्रियाओं पर नियन्त्रण बनाए रखने का कार्य करती है। रिजर्व बैंक देश में साख के नियन्त्रण एवं नियमन के लिए परिमाणात्मक साख नियन्त्रण की तकनीकें जैसे बैंक दर, खुले बाजार की क्रियाएं CRR एवं SLR में समय-समय पर आवश्यक बदलाव आदि अपनाता है। इसी प्रकार रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण हेतु चयनात्मक साख नियन्त्रण प्रणाली का भी सहारा लेता है। अत: संक्षेप में हम कह सकते हैं कि रिजर्व बैंक भारतीय अर्थव्यवस्था के समुचित विकास हेतु साख नियमन एवं नियन्त्रण का कार्य करता है।

## 5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)

1. भारतीय वित्तीय प्रणाली—टी. आर. जैन एवं डॉ. ओ. पी. खन्ना।
2. भारतीय वित्तीय प्रणाली—कुलदीप गुप्ता एवं डॉ. राजकुमार।

## 6. नमूने के प्रश्न (Self-Assessment Questions)

1. भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों की व्याख्या करें।
   (Explain the main functions of Reserve Bank of India)

2. मौद्रिक नीति क्या है ? रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति की विशेषताएं क्या है ?
   (What is the Monetary Policy ? What are the main features of the present monetary policy of the RBI.)

3. रिजर्व बैंक ने नई मौद्रिक नीति से साख नियन्त्रण के लिए कौन–कौन से उपाय अपनाए हैं ?
   (What measures has been taken by RBI to control credit in new monetary policy)

4. भारतीय रिजर्व बैंक देश में साख की मात्रा किस प्रकार नियन्त्रित करता है ?
   (How does the Reserve Bank of India regulate the volume of credit in the country)

Paper : BC-206 (i) Indian Financial System | Revised by : M.L. Singla

Lesson No : 11

# Determination and Regulation of Interest Rates in India

**विषय-सामग्री (Contents)**


1. परिचय (Introduction)
2. उद्देश्य (Objectives)
3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)
    - 3.1 ब्याज दर की परिभाषाएँ (Definitions of Interest Rates)
    - 3.2 मौद्रिक और वास्तविक ब्याज की दर (Nominal and Real Rate of Interest)
    - 3.3 ब्याज की दर की संरचना (Structure of Rate of Interest)
        - 3.3.1 अल्पकालीन व दीर्घकालीन ब्याज के दरों की सिद्धान्त (Theories of Short-term and Long-term Rate of Interest.)
    - 3.4 ब्याज दर अन्तर-प्रकार एवं स्रोत (Interest Rate Differentials Forms/Types and Sources)
        - 3.4.1 ब्याज दर अन्तरों के रूप (Forms of Interest Rate Differentials)
        - 3.4.2 ब्याज-दर अन्तरों के स्रोत (Sources of Interest Rate Differentials)
    - 3.5 प्रशासित ब्याज दरों की वर्तमान प्रणाली के दोष (Deficiencies in the Prevailing system of Administered Interest Rates)
    - 3.6 भारत में ब्याज दरों का नियमन (Regulations of Interest Rates in India)
4. सारांश (Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)
6. नमूने के प्रश्न (Self Assessment Questions)


## 1. परिचय (Introduction)

साधरण भाषा में ऋणी, ऋणदाता से प्राप्त ऋण की राशि को प्रयोग करने के बदले में प्रतिफल स्वरूप ऋणदाता को जो भुगतान करता है वह ब्याज कहलाता है। अर्थात् ब्याज वह धन-राशि है जो ऋणदाता को मुद्रा-पूंजी की सेवाओं के बदले में दी जाती है। ब्याज की दर वार्षिक या मासिक हो सकती है।

अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि ब्याज वह राशि है जो एक निश्चित समय में एक निश्चित दर पर उधार ली गई कुल रकम के छोटे से हिस्से के रूप में ऋणी ऋणदाता को देता है। ब्याज की दर को शेष बकाया रकम के छोटे से हिस्से के रूप में समय की प्रति इकाई दी गई ब्याज की राशि के रूप में व्यक्त किया जाता है।

ब्याज वह मूल्य है जो अलग-अलग क्षेत्रों में निर्णय निर्माण (Decision Making) को प्रभावित करती है और इसके और प्रभाव भी हैं। इस अध्याय में हम यह देखेंगे कि अर्थव्यवस्था में ब्याज दरों के सामान्य स्तर का निर्धारण एवं नियमन कैसे होता है।

## 2. उद्देश्य (Objectives)

इस पाठ का उद्देश्य आपको अर्थव्यवस्था में अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ब्याज दरों के निर्धारण एवं नियमन के तरीके से अवगत करवाना है। अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ब्याज दरों के निर्धारण से सम्बन्धित विभिन्न सिद्धान्तों से भी अवगत करवाना है। इसके अतिरिक्त बाजार में प्रचलित विभिन्न ब्याज दरों (ब्याज दरों में अन्तर के रूप) से भी अवगत करवाना है। अत: इस पाठ का अध्ययन करने के बाद आप जान पायेंगे कि ब्याज दरों का निर्धारण एवं नियमन कैसे होता है।

## 3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)

इस पाठ में ब्याज के अर्थ, ब्याज दर की संरचना, अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ब्याज की दरों के विभिन्न सिद्धान्तों तथा ब्याज दर अन्तरों के विभिन्न रूपों के अतिरिक्त भारत में ब्याज दरों के नियमन से सम्बन्धित जानकारी निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत दी गई है—

### 3.1 ब्याज दर की परिभाषाएँ (Definitions of Interest Rate)

1. **कार्वर** के अनुसार, ''ब्याज वह आय है जो पूँजी के स्वामी को प्राप्त होती है।''
   (Interest is the income which goes to the owner of Capital—Carver)

2. **मैक्कोनल** के अनुसार, ''ब्याज वह कीमत है जो मुद्रा अथवा ऋण योग्य कोष की सेवा के लिए दी जाती है।''
   (Interest is the payment paid for the use of money or the use of loanable funds—Mc Connel)

ब्याज ऋणी के लिए एक लागत तथा ऋणदाता के लिए आय है। अत: अन्य बातों के साथ-साथ ब्याज की दर, उधार लेने एवं उधार देने, बचत तथा निवेश, पोर्टफोलियो रचना (Portfolio Composition) परियोजनाओं के चयन एवं उनकी अवधि, चुनी गई उत्पादन तकनीकों की पूँजी गहनता अन्तर्राष्ट्रीय पूँजी प्रवाह एवं आय के वितरण को प्रभावित करती है।

### 3.2 मौद्रिक और वास्तविक ब्याज की दर (Nominal and Real Rate of Interest)

मौद्रिक ब्याज की दर से मतलब ब्याज दर की उस राशि से है जो बाजार में प्रचलित ब्याज दर पर दिया जाता है, जैसे—8 प्रतिशत, 10 प्रतिशत। इसके विपरीत ब्याज की असली दर से अभिप्राय उस दर या राशि से है जो मौद्रिक ब्याज दर में स्फीति दर (Inflation Rate) को घटा कर दी जाती है। इन दोनों के अन्तर को एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लो 1000 रुपये के एक सरकार बाण्ड पर ब्याज की दर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष है। इस बाण्ड के खरीदने वाले को वर्ष में 1100 रुपये प्राप्त होंगे। अत: मौद्रिक प्राप्ति 100 रुपये हैं और ब्याज की दर 10% है। अब मान लो प्रतिवर्ष स्फीति 6% है और

यह दर आगे बने रहने की संभावना है। इसका अर्थ यह हुआ कि मूल 1000 रुपये की वास्तविक क्रय शक्ति को बनाए रखने के लिए वर्ष के अन्त में 1060 रुपये की आवश्यकता होगी। दूसरे शब्दों में 100 रुपये की मौद्रिक प्राप्ति पर 60 रुपये बढ़ी हुई कीमतों की क्षति पूर्ति को व्यक्त करता है। असल प्राप्ति को निकालने के लिए इस 60 रुपये को कुल मौद्रिक प्राप्ति में से घटाना पड़ेगा।

## 3.3 ब्याज की दर की संरचना (Structure of Rate Interest)

ब्याज में प्रचलित ब्याज की दरों के ढाँचे को दो भागों में बांटा जा सकता है—

(a) अल्पकालीन ब्याज की दर (Short Term Rate of Interest)

(b) दीर्घकालीन ब्याज की दर (Long Term Rate of Interest)

### (a) अल्पकालीन ब्याज की दर (Short Term Rate of Interest)

यह वह ब्याज की दर है जो अल्पकालीन ऋणों या बैंकों के लिए दी जाती है। (It is that rate of interest which is paid on bank loans or short term Loans) क्योंकि बैंकों के कर्जे अल्पकाल के लिए दिए जाते हैं। इन ब्याज की दरों को कम करना अपेक्षाकृत सरल होता है।

### (b) दीर्घकालीन ब्याज की दर (Long Term Rate of Interest)

यह वह ब्याज की दर है जो दीर्घकालीन ऋणों के लिए दी जाती है। बॉण्ड्स प्रतिभूतियों (Securities) डिबेन्चर (Debenture) आदि पर दिये जाने वाले ऋण दीर्घकालीन ऋण है। (It is that rate which is paid on bonds, securities and other long term loans) यह ऋण अधिक स्थिर होते हैं। इनमें अल्पकालीन ब्याज की दरों की तुलना में कम परिवर्तन आते हैं।

### 3.3.1 अल्पकालीन व दीर्घकालीन ब्याज की दरों के सिद्धान्त (Theories of Short Term and Long Term of Interest)

अल्पकालीन व दीर्घकालीन ब्याज की दरों से सम्बन्धित मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित है।

### ( अ ) तरलता सिद्धान्त (Liquidity Theory)

यह सिद्धान्त केन्ज के तरलता अधिमान सिद्धान्त पर आधारित है। इसके अनुसार ब्याज की दर के निर्धारण पर प्रतिभूतियों की तरलता का ही प्रभाव पड़ता है। तरलता का अभिप्राय उस सुविधा से है जिसके फलस्वरूप प्रतिभूतियों को नकदी में बदला जा सकता है। मुद्रा को तरलता के स्थान पर प्रतिभूतियों के रूप में रखने में पूंजीगत लाभ (Capital gain) या पूंजीगत हानि की सम्भावना होती है।

इस सिद्धान्त के अनुसार ऋणों को तरलता में बदलने की सुविधा तथा समय के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अल्पकालीन ब्याज की दर दीर्घकालीन ब्याज की दर की तुलना में कम होती है क्योंकि अल्पकालीन ऋणों को तरलता में शीघ्रता से बदला जा सकता है। इसलिए उनके सम्बन्ध में पूंजीगत लाभ या हानि की सम्भावना कम होती है।

### ( ब ) खंडित बाजार सिद्धान्त (Segmented Market Theory)

इसके अनुसार मुद्रा बाजार अल्पकालीन बाजार तथा दीर्घकालीन ब्याज बाजार में पूर्ण रूप में विभाजित होता है अर्थात् मुद्रा बाजार खण्डों (Segmented) = बंटा हुआ है। अल्पकालीन कर्जों को दीर्घकालीन कर्जों में नहीं बदला जाता तथा दीर्घकालीन कर्जों को अल्पकालीन में नहीं बदला जा सकता।

इस सिद्धान्त के अनुसार अल्पकालीन ब्याज की दर में होने वाले परिवर्तनों का दीर्घकालीन ब्याज की दर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसी प्रकार दीर्घकालीन ब्याज की दरों में होने वाले परिवर्तनों का अल्पकालीन ब्याज की दरों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि ब्याज की विभिन्न दरें एक-दूसरे से सम्बन्धित नहीं होती हैं।

**( स ) ब्याज की बाजार दर का निर्धारण (Determination of Market Rate of Interest)**

ब्याज की दर के निर्धारण का विषय अर्थशास्त्रियों के बीच एक विवाद का विषय रहा है। उनके विचारों में अन्तर कई कारणों से रहा है। उन कारणों की व्याख्या करने की यहाँ कोई आवश्यकता भी नहीं। ब्याज दर के निर्धारण से सम्बन्धित सामान्यत: चार सिद्धान्त अध्ययन के विषय में आते हैं। उनका संक्षेप में वर्णन निम्न प्रकार से किया जाता है—

**(i) ब्याज की परम्परावादी सिद्धान्त (Classical Theory of Interest)**— इसके अनुसार उत्पादकता, मितव्ययिता (Thrift) त्याग (Abstinence) आदि वास्तविक तत्वों के कारण ब्याज उत्पन्न होता है। इसलिए यह सिद्धान्त ब्याज को एक वास्तविक क्रिया मानता है। इस सिद्धान्त के अुनसार ब्याज का निर्धरण पूंजी की मांग तथा पूंजी की पूर्ति द्वारा होता है। पूंजी की पूर्ति बचतों पर निर्भर करती है। बचत की पूर्ति पर संयम, प्रतीक्षा, अधिमान आदि वास्तविक तत्वों का प्रभाव पड़ता है। ये वास्तविक तत्व ब्याज की दर पर निर्भर करते हैं। अत: बचत ब्याज की दर का फलन ($S = f(r)$ है। दूसरी ओर पूंजी का मांग पूंजी पदार्थों जैसे—मशीन, प्लांट आदि को प्राप्त करने के लिए की जाती है। मांग पक्ष की ओर भी निवेश ब्याज की दर पर निर्भर करता है। अतएव निवेश ब्याज की दर का फलन ($I = f(r)$ है। जिस ब्याज की दर पर बचत और निवेश एक दूसरे के बराबर हो जाते हैं। ($S = I$) वहां पर ही ब्याज का निर्धारण हो जाता है।

**(ii) नव परम्परावादी सिद्धान्त (Neo Classical Theory)**—इसके अनुसार ब्याज वह कीमत है जो ऋणयोग्य कोष की मांग तथा पूर्ति को सन्तुलित करती है। यह सिद्धान्त ब्याज की दर को निर्धारित करते समय मौद्रिक तत्वों जैसे—मुद्रा का संचय, मुद्रा का असंचय तथा बैंक साख के साथ-साथ वास्तविक तत्वों जैसे बचत, उत्पादकता आदि को भी ध्यान में रखता है।

**(iii) ब्याज का तरलता अधिमान सिद्धान्त (Liquidigy Preference Theory of Interest)**— लार्ड केन्ज ने अपनी पुस्तक 'सामान्य सिद्धान्त' में ब्याज निर्धारण का एक मौद्रिक सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। जिसे तरलता अधिमान सिद्धान्त कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्याज मुद्रा की सेवाओं की कीमत है। ब्याज एक मौद्रिक क्रिया है क्योंकि मुद्रा की मांग तथा पूर्ति द्वारा ब्याज का निर्धारण होता है। केन्ज के अनुसार किसी निश्चित काल में मुद्रा की पूर्ति तो देश में स्थिर रहती है। अत: ब्याज की दर मुद्रा की मांग पर निर्भर करती है। मुद्रा की मांग नकदी में रखने के लिए की जाती है। लोग मुद्रा को नकदी के रूप में रखना ही पसन्द करते हैं। अत: ब्याज इस नकदी अधिमान के त्यागने का पुरस्कार है। केन्ज के अनुसार मुद्रा की मांग तीन उद्देश्यों के लिए की जाती है।

—क्रय-विक्रय उद्देश्य

—सावधानी उद्देश्य

—सट्टा उद्देश्य मुद्रा की पूर्ति देश में परिचालन मुद्रा तथा बैंक जमा पर निर्भर करती है। ब्याज की दर का निर्धारण उस बिन्दु पर हो जाता है जहां मुद्रा की मांग मुद्रा की पूर्ति के बराबर हो जाती है। चूंकि अल्पकाल में मुद्रा स्थिर रहती है। अत: तरलता अधिमान अधिक होने पर ब्याज

की अधिक और तरलता अधिमान के कम हो जाने पर ब्याज की दर कम हो जाती है। केन्ज के अनुसार ब्याज के कम होने की एक सीमा है। यदि ब्याज की दर उस सीमा से कम हो जाती है तो लोग मुद्रा को उधार देने की बजाय अपने पास नकद रखना अधिक पसन्द करते हैं।

**(iv) ब्याज की आधुनिक सिद्धान्त (Modern Theory of Interest)**— ब्याज के आधुनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रो. हिक्स तथा प्रो. हैन्सन ने किया है। इस सिद्धान्त के अनुसार ब्याज की सन्तुलित दर एक ओर तो मुद्रा की पूर्ति तथा मांग को प्रभावित करने वाले मौद्रिक तत्वों पर निर्भर करती है तथा दूसरी ओर बचत तथा निवेश को प्रभावित करने वाले वास्तविक तत्वों पर निर्भर करती है। आधुनिक सिद्धान्त में ब्याज तथा आय के विभिन्न स्तरों पर मुद्रा की पूर्ति तथा मांग की समानता अर्थात् मौद्रिक सन्तुलन को तरलता मुद्रा वक्र द्वारा प्रकट किया गया है। इसी प्रकार ब्याज तथा आय के विभिन्न स्तरों पर बचत तथा आय निवेश की समानता अर्थात् वास्तविक सन्तुलन को निवेश बचत वक्र द्वारा व्यक्त किया गया है। ये दोनों वक्र जिस बिन्दु पर एक दूसरे को काटते हैं। वह बिन्दु ब्याज दर का सन्तुलन बिन्दु होता है।

### 3.4 ब्याज दर अन्तर-प्रकार एवं स्त्रोत (Interest Rate Differentials-Types Sources)

ब्याज दरों की सावधि संरचना पर अर्थशास्त्रियों की विचारधारा हमें यह बतलाती है कि ब्याज की दरों में अन्तर का केवल एक मात्र कारण ऋण की परिपक्वता की अवधि है। परन्तु ब्याज की दरों में कई अन्तर अन्य महत्वपूर्ण स्त्रोतों से उदय होते हैं। वास्तव में ब्याज दरों में अन्तर के विभिन्न स्त्रोतों की तरह ब्याज दर की भी कई संरचनाएँ हो सकती हैं और ब्याज दरों की सावधि संरचना अर्थव्यवस्था में पाई जाने वाली कई संरचनाओं में से एक हो सकती है। इतना ही नहीं, ब्याज की दर एक संरचना की तुलना में कितने भी प्रकार की हो सकती है। अत: ब्याज दर अन्तरों के कई स्त्रोत हो सकते हैं। इन स्त्रोतों की व्याख्या करने से पहले भारतीय अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में पाये जाने वाले ब्याज दर अन्तर के रूपों को व्यक्त करना अनिवार्य है।

#### 3.4.1 ब्याज दर अन्तरों के रूप (Forms of Interest Rate Differentials)

**(1) प्रशासनिक दरें (Administered Rates)**— ये दरें वे दरें हैं जिसका निर्धारण किसी एक प्राधिकारी अथवा ऋणी ऋणदाता द्वारा निश्चित की जाती है। परन्तु इनमें कोई भी परिवर्तन, किसी एक प्राधिकारी अथवा सरकार द्वारा नियुक्त किसी एजेन्सी द्वारा किया जा सकता है। भारत जैसा विकासशील अर्थ व्यवस्थाओं में ऐसी प्रशासनिक दरें महत्वपूर्ण स्थान रखती है। प्रशासिक दरों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

(a) जमा दरें (Deposits Rates)

(b) ऋण देय दरें (Lending Rates)

**(i) जमा दरें (Deposits Rates)**—विभिन्न परिपक्वताओं की जमाओं की विभिन्न राशियों पर व्यापारिक बैंकों की जमा दरों का निर्धारण देश का केन्द्रीय बैंक करता है। डाकखानों में बचतों और सावधिक जमाओं पर जमा दरें तथा विभिन्न प्रकार के छोटे बचत सर्टीफिकेटों पर ब्याज की दरें भारतीय सरकार द्वारा निश्चित की जाती हैं। भारत में अधिकांश गृहस्थी इन जमाओं में अपनी धनराशियां रखते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी भी जमाएं हैं जिन्हें विभिन्न संस्थान एवं फर्में स्वयं की प्रशासिक दरों पर स्वीकार करती हैं।

**(ii) ऋण देय दरें (Lending Rates)**—ये वे दरें हैं जिनका निर्धारण किसी प्राधिकारी द्वारा किया जाता है। भारत में सहकारी बैंक भूमि विकास बैंक तथा विकास बैंक है। जिनकी ऋण देय दरें उनके द्वारा ही प्रशासित होती हैं परन्तु व्यापारिक बैंकों की ऋण देय दरें भारत में रिजर्व बैंक द्वारा प्रबन्धित की जाती हैं।

**(2) बाजार निर्धारित दरें (Market Determined Rates)**—ये दरें बाजार में ऋण योग्य कोषों के लिए मांग और पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित होती हैं। इन्हें भी दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

(i) बिक्री योग्य सरकारी ऋणों पर ब्याज दरें।

(ii) अन्य बिक्री योग्य ऋणों पर ब्याज दरें।

**(i) बिक्री योग्य सरकारी ऋणों पर ब्याज दरें**—इससे केन्द्र तथा सरकार स्थानीय निकास, विकास बैंक तथा इसी प्रकार अन्य अर्धसरकारी एजेंसियों जैसे—पोर्ट ट्रस्ट राज्य बिजली बोर्ड आदि के ऋणों को शामिल किया जाता है। क्योंकि (1) ये गैर-सरकारी एजेंसियों के बिक्री योग्य ऋणों की असल राशि तथा ब्याज के भुगतान की गारंटी सरकार द्वारा दी जाती है। इसलिए ये ऋण दोष जोखिम मुक्त है। (2) इन पर केन्द्रीय या रिजर्व बैंक ने एक निश्चित वैधानिक निवेश आवश्यकता की प्रतिबद्धता लगा रखी है। इसलिए ऐसे ऋणों की ब्याज दर बहुत कम है और सामान्यतया इनकी ब्याज दर में उतार-चढ़ाव नहीं आता।

**(ii) अन्य बिक्री योग्य ऋणों पर ब्याज दरें**—बिक्री योग्य ऋणों के कई और प्रकार हैं जैसे—निगम ऋण और गैर-निगम ऋण। कई निगमें खुले बाजार में बाण्ड या डिबेंचर या अधिमान शेयर जारी करके इकट्ठा करती हैं। परिणामस्वरूप मांग और पूर्ति की बाजार दशाओं के अनुसार इनकी कीमतों में दिन-प्रतिदिन और घण्टा प्रति घण्टा परिवर्तन आता रहता है।

### 3.4.2 ब्याज दर-अन्तरों के स्रोत (Sources of Interest Rate Differentials)

किसी भी अर्थव्यवस्था में ब्याज दर संरचनाओं की अनेक संख्याओं के बारे में हमने पहले व्याख्या की है। इन सभी स्रोतों की व्यापक सैद्धान्तिक व्याख्या करना काफी कठिन है। इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था के अनुभव के आधार पर ब्याज पर अन्तरों के केवल प्रमुख स्रोतों की व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती है—

#### (1) परिसम्पत्तियों की तरलता में अन्तर

किसी परिसम्पत्ति की तरलता से अभिप्राय आसानी और निश्चितता की उस मात्रा से है। जिसमें इसके अल्पकालीन नोटिस पर बिना किसी हानि के इसे नकदी में बदला जा सकता है। अन्य बातों के समान रहने पर ऋणदाता या परिसम्पत्ति धारक कम तरल परिसम्पत्तियों की तुलना में अधिक तरल परिसम्पत्ति को अधिक पसन्द करते हैं। इसका अर्थ है कम तरल ऋण की तुलना में अधिक तरल ऋण पर ब्याज की दर कम होगी। गैर-मौद्रिक वित्तीय परिसम्पत्तियों की तरलता (i) बिक्री योग्यता (ii) परिपक्वता की अवधि द्वारा निर्धारित होती है। कई वित्तीय परिपत्र जैसे—बॉण्ड, अधिमान शेयर, ट्रेजरी बिल आदि को अल्पकालीन नोटिस पर संगठित बाजार में सरलता से खरीदा बेचा जा सकता है और इसलिए इनको निकट मुद्रा समझा जाता है। ये उन अन्य परिपत्रों की तुलना में अधिक सरल है जो बिक्री योग्य नहीं है। उदाहरण के लिए जैसे उधार तथा बैंकों सरकारों द्वारा दिए गए अग्रिम गैर-बिक्री योग्य ऋणों के मामले में अल्पकालीन परिपक्वता वाली प्रतिभूतियों की तुलना में दीर्घकालीन परिपक्वता वाली प्रति कम तरल होती है क्योंकि इनको नकदी में बदलने के लिए लम्बी प्रतीक्षा अवश्य देखनी पड़ती है।

## 2. चूक और विलम्बित देनदारी के जोखिम में अन्तर (Differences in Risk of Defanit and Overdues)

किसी भी व्यक्ति अथवा संगठन को उधार देने में ऋणदाता की जोखिम मूल रकम में चूक तथा ऋण पर प्राप्त होने वाले ब्याज से सम्बन्धित होता है। इसलिए ऋणदाता इस जोखिम के बदले में ऋणी से एक प्रकार की अतिरिक्त जमानत (Collateral Security) की अपेक्षा करता है। फिर भी चूक का जोखिम कई कारणों से बना रहता है। जैसे—जमानत का कानूनी रूप से दोषपूर्ण या अपर्याप्त होना इसलिए ऋणदाता जोखिम के बदले अतिरिक्त का प्रतिफल लेता है। जिसे ब्याज दर में शामिल किया जाता है। यह अलग-अलग मामलों में अलग-अलग हो सकता है।

## 3. परिपक्वता की अवधि में अन्तर (Differences in Term of Maturity)

जब ब्याज की दरों में अन्तर ऋण की परिपक्वता की अवधि के कारण होता है तो इसे ब्याज दरों की अवधि संरचना या समय संरचना या परिपक्वता संरचना कहा जाता है। यह एक ही प्रकार की प्रतिभूतियों, प्राप्तियों और परिपक्वता के बीच एक कड़ी स्थापित करती है। इन दोनों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने वाले वक्र को प्राप्ति वक्र कहा जाता है। सम्भवतः लोग अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन दोनों प्रकार की प्रतिभूतियां अपने पास रखते हैं और दोनों समयों की सापेक्ष प्राप्ति आय को ध्यान में रखते हुए वे अपनी प्रतिभूतियों के रख-रखाव का समन्वय करते हैं। अल्पकालीन प्रतिभूतियों की तुलना में दीर्घ कालीन प्रतिभूतियों की कीमत में अधिक उतार-चढ़ाव आता है। इससे वह स्पष्ट होता है कि समय की एक निश्चित अवधि में ऋणों के प्रकार एवं परिपक्वता के अनुसार ब्याज की विभिन्न दरों की संरचना जो प्रचलन में होती है। उसे ब्याज दरों की अवधि संरचना कहा जाता है। परिपक्वता की अवधि पर निर्भर ऋण के प्रत्येक प्रकार की ब्याज दरों की अवधि संरचना अपनी स्वयं की होगी और इसी प्रकार प्रत्येक परिसम्पत्ति की भी अपनी स्वयं की ब्याज दरों की संरचना होगी। इसीलिए समय के कई निश्चित बिन्दु पर बाजार में ब्याज की दरों की अनेक अवधि संरचनाएं बाजार में पाई जायेंगी।

## 4. ऋण सेवाओं की लागत में अन्तर (Difference in Cost of Servicing Loans)

ऋण सेवाएं प्रदान करने में भी ऋण दाता को लागतें उठानी पड़ती है या रुपया उधार देते समय और देन के बाद कई प्रकार के खर्च और कष्ट ऋणदाता को सहन करने पड़ते हैं। उन्हें ऋण आवेदन-पत्र का मूल्यांकन करना पड़ता है। जिसमें यह देखना पड़ता है कि जिस परियोजना के लिए ऋण मांगा जा रहा है क्या वह आय लेने वाली योजना है। परियोजना के लिए कोषों के अन्य स्रोत वित्त बन्दोबस्त की पर्याप्तता ऋणी द्वारा ऋण के बदले में दी गई प्रतिभूति का मूल्य, बिक्री योग्यता और पूंजी निश्चितता, ऋणी की निष्ठा ईमानदारी या पिछले उधार/साख रिकार्ड आदि। ऋण के प्रचलन के दौरान ऋण के प्रयोग एवं बदले में दी प्रतिभूति/आश्वासन को भी देखना होता है। ऋण का हिसाब किताब रखना पड़ता है। यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि ब्याज और ऋण किश्तों का भुगतान नियमित रूप से हो रहा है या लिए गए ऋण की परिपक्वता पर असल रकम का भुगतान हो गया है या नही। बकाया राशि या जानबूझ कर किए गए चूक के मामले में बकाया रकम की अधिकतम मात्रा की वापसी के लिए विशेष प्रयत्न करने पड़ते हैं। इनमें से कुछ लागतें ऋण के आकार या अवधि की ओर ध्यान दिए बिना, प्रति ऋण लेन-देन बन्धी होती है। छोटे ऋणों के सम्बन्ध में बन्धी लागतें अधिक होती है। कई वित्तीय ऋण दाताओं, विशेषकर बैंकों के लिए एक कठिनाई ऋणियों की रिहायशी स्थिति, विशेषकर ग्रामीण ऋणियों के बारे में सामने आती है। ये कारक छोटे ऋणों के प्रति रुपया-लागत को और बढ़ा देते हैं।

### 5. उधार देने सम्बन्धी औपचारिकताओं और अतिरिक्त-ऋण सेवाओं में अन्तर (Differences in Lending Formalities and Extra Loan Services)

ब्याज की ऊँची दर होते हुए भी लोग व्यापारिक बैंकों की बजाए वित्तीय संस्थाओं से उधार लेना अधिक पसन्द करते हैं। क्योंकि (i) ऋण देने के मामले में वित्तीय कम्पनियां उदार है और कम औपचारिकताएं अपनाती हैं। जबकि व्यापारिक बैंक ऋणियों से कई औपचारिकताओं की अपेक्षा करते हैं। जैसे—व्यवसाय के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की सूचनाएं एवं रहस्योदघाटन, अन्य स्रोतों से प्राप्त ऋणों, बकाया राशि, विशुद्ध मूल्य आदि। ये सभी औपचारिकताएं ऋणी पसन्द नहीं करते। (ii) बैंक मार्जिन आवश्यकता और ऋण अवधि की लम्बाई के बारे में बहुत कठोर है। कुछ ऋणी इन सभी औपचारिकताओं से बचने की कोशिश करते हैं। बेशक उनको ब्याज की दर अधिक ही क्यों न देनी पड़े। इसके लिए विपरीत वित्तीय समस्याएं पूर्ण और उदार ऋण देती है। वे आवश्यक औपचारिकताएं को स्वयं ही पूरी कर लेती है।

### 6. एकाधिकार लाभों में अन्तर (Differences in Monopoly Gains)

निजी साहूकारों, देशी बैंकरों, वित्त कम्पनियों आदि द्वारा ली जाने वाली ब्याज की दर में भी एकाधिकार अथवा शोषण लाभ का अंश होता है। इसलिए इनकी ब्याज दरें, मुद्रा बाजार में बैंकों द्वारा ली जाने वाली दरों से सामान्यता अधिक होती है।

## 3.5 प्रशासित ब्याज दरों की वर्तमान प्रणाली में दोष (Deficiencies in the Prevailing System of Administered Interest Rates)

भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा नियुक्त चक्रवर्ती समिति (Chakravarty Committee 1985) ने भारत में प्रचलित वर्तमान प्रशासित ब्याज दरों का निरीक्षण किया है। समिति ने इसमें पाए जाने वाले निम्नलिखित दोष को बतलाया है।

(1) **सरकारी प्रतिभूतियों पर सापेक्षताया निम्न प्राप्ति (Relatively Low Yield on Government Securities)**—सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज की दर को बहुत ही कम रखा गया है। उदाहरण के लिए सन् 1974 से 91 दिन के ट्रेजरी बिलों पर यह दर 4.6% प्रतिवर्ष निश्चित की हुई है। जबकि अन्य प्रशासित मुद्रा बाजार दरें (जैसे RBI की बैंक दर बैंकों की व्यापारिक बिल बट्टा दर) बढ़ चुकी है। यह निम्न प्राप्ति (Low Yield) बैंकों के कोषों की औसत लागत भी नहीं निकाल पाती।

(2) **ब्याज की अनेक रियायती दरें (Too Many Concessional Rates of Interest)**—प्राथमिकता क्षेत्र तथा औद्योगिक परियोजनाओं ऋणियों एवं विभिन्न श्रेणियों के लिए ब्याज की अनेक रियायती दरों की जटिल प्रणाली है और वह भी दीर्घकालीन ऋणां के चारों ओर बढ़ चुकी है। इसके कारण लक्षित समूहों को साख की पर्याप्त सुपुर्दगी सुनिश्चित किए बगैर विभिन्न हितों/अभिरूचियों तुष्टीकरण (Appeasement) या पक्षपात (favour) करती है। इनमें से कुछ रियायती दर बड़ी मुश्किल से बैंकों की लागतें ही निकाल पाती हैं और कई मामलों में यह लागतों से भी नीचे रहती हैं।

(3) **बैंकों की जमा तथा उधार दरों के निर्धारण में कमियाँ (Short Comings in the Fixation of Deposit and Lending Rates of Interest of Banks)**—आज की प्रशासित ब्याज दर प्रणाली के अन्तर्गत विभिन्न क्षेत्रों के लिए ब्याज की जमा दरें, ब्याज की अधिकतम उधार देय दरें तथा ब्याज की रियायती दरें भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निश्चित की जाती है। इन सभी में अनेक दोष हैं। पिछले तीन चार वर्षो में ब्याज की जमा दरें इतनी कम कर दी गई हैं कि छोटे जमाकर्ता

बैंकों में अपनी जमाराशि जमा करवाने से पहले अनेक बार सोचते हैं। इसलिए वह अपनी उस राशि को उन वित्तीय संस्थाओं में जमा करवाना पसन्द करना है जहाँ उसे ब्याज की ऊँची दर उपलब्ध हो जाती है।

(4) **साख के परिमाणात्मक पर अधिक निर्भरता (Excessive Reliance on Quantitative Controls of Credit)**—यह निर्भरता निम्न प्रशासित ब्याज दरों के कारण प्रेरित हुई है, निम्न दरों के फलस्वरूप बैंक साख की मांग को बहुत अधिक प्रोत्साहन मिला है पर बैंक अपने उन निमित साधनों से इस सम्पूर्ण की पूर्ति नहीं कर सकते जो वे जनता से जमाओं के रूप में इकट्ठा करते हैं। इसके अलावा परिवर्तित बाजार दशाओं के अनुरूप ब्याज दरों में बार–बार परिवर्तन नहीं लाया जा सकता व बढ़ती कुल मांग के लिए उचित मौद्रिक प्रबन्ध की जरूरत होती है।

### 3.6 भारत में ब्याज दरों का नियमन (Regulation of Interest Rates in India)

ब्याज दरों के नियमन का विषय एक बहुत ही जटिल विषय है। भारत जैसे एक अल्पविकसित देश में यह नियमन और भी कठिन है क्योंकि यहाँ कई प्रकार की वित्तीय प्रणालियाँ हैं और अनेक प्रकार की वित्तीय संस्थाएं हैं। फिर भी भारत सरकार ने इस संबंध में प्रो. एस. चक्रवर्ती (S. Chakravarty) की अध्यक्षता में चक्रवर्ती समिति की नियुक्ति की थी। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट सन् 1985 में प्रस्तुत की। इस समिति की सिफारिशों में मुख्य उद्देश्य मौद्रिक नियमन में सुधार करना है। ताकि कीमत स्थिरता को प्रोत्साहन मिले। ब्याज दरों के नियमन के सम्बन्ध समिति की सिफारिशों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार से किया जा सकता है।

1. **ब्याज की लोचशील दरें (Flexible Interest Rates)**—इस संबंध में समिति का यह कहना है कि साख की कीमत बहुत कम नहीं होनी चाहिए चाहे वह सरकार अथवा सार्वजनिक या निजी क्षत्र में व्यापारिक उधार लेने वाले ही क्यों न हों। अपने इस विचार के पक्ष में समिति न कहा कि ब्याज की निम्न दरों से RBI के पास पुनर्वित के लिए कम राशि बच पाती है वे ऋणियों द्वारा साख का प्रभावपूर्ण प्रयोग निरुत्साहित होता है। वित्तीय बचतें निरुत्साहित होती हैं और बैंकों व अन्य वित्तीय संस्थाओं की लाभदायकता कम होती है।

2. **ब्याज दरें और मुद्रा स्फीति की अनुमानित दर (Interest Rates and Expected Rate of Inflation)**—समिति ने यह भी सिफारिश की कि प्रशासित ब्याज दरों को मुद्रा स्फीति की अनुमानित दर से जोड़ा जाए। दूसरे शब्दों में मौद्रिक और वास्तविक ब्याज दरों में सम्बन्ध स्थापित किया जाए।

3. **सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दरें (Interest Rates on Securities)**—भारत सरकार के कोष उधार लेने के मुख्यतया दो स्रोत हैं। ट्रेजरी बिल व मध्यम कालीन या दीर्घकालीन परिपक्वता के बिक्री योग्य ऋण। इनमें से 90% से अधिक के ट्रेजरी बिल और 30% से अधिक तिथि प्रतिभूतियाँ भारतीय रिजर्व बैंक के पास है। अतएव भारतीय रिजर्व बैंक केन्द्रीय सरकारी ऋणों और ट्रेजरी बिलों का बन्धक धारक है। जैसे पहले भी कहा गया है कि सन् 1974 से इन पर निम्न ब्याज (4.6% प्रतिवर्ष) की दर रखी गई है। इसलिए समिति ने यह सिफारिश की कि इन सभी दरों का ऊपर की ओर संशोधन होना चाहिए ताकि खुले बाजार में यह प्रति स्पर्धात्मक बन सकें और सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश को आकर्षित कर सकें।

4. **बैंकों की जमा तथा उधर देय दरें (Deposits and Lending Rates of Banks)**—इन दरों के बारे में समिति ने निम्नलिखित सिफारिशें की हैं—

(i) 5 या इससे अधिक परिपक्वता वाली जमाओं के लिए लागू की जाने वाली अधिकतम जमा दर दीर्घकालीन मुद्रा स्फीति की अनुमानित दर + धनात्मक ब्याज की वास्तविक दर 2% प्रतिवर्ष से कम निश्चित नहीं करनी चाहिए।

(ii) एक वर्ष जमा दर वास्तविक रूप में सीमान्तक रूप से धनात्मक होनी चाहिए यानि यह अल्पकालीन की मुद्रा स्फीति की अनुमानित दर + एक छोटी वास्तविक ब्याज की दर होनी चाहिए।

ये दोनों दरें भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निश्चित की जानी चाहिए। समिति ने ब्याज दरों के नियमन से सम्बन्धित कई सिफारिशें की हैं परन्तु समिति द्वारा की गई सिफारिशें अस्पष्ट है। अतएव अभी देश में ब्याज दरों के नियमन से सम्बन्धित कोई स्पष्ट नीति सामने नहीं आई है।

## 4. सारांश (Summary)

इस पाठ का अधययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण की ब्याज की दरें अलग-अलग होती है। इसी प्रकार ऋणदाता ऋण की मूल राशि एवं ब्याज की अदायगी के जोखिम तथा ऋणी द्वारा दी गई जमानत को ध्यान में रखकर ब्याज की दर निर्धारित करता है। इसके अलावा देश मं प्रचलित ब्याज दरें, बचत की मात्रा, निवेश की सम्भावनाएँ आदि भी ब्याज की दर को प्रभावित करते हैं। परन्तु भारत में ब्याज की दरों का निर्धारण करना बहुत ही जटिल कार्य है। इसका मुख्य कारण देश में पूर्णतया विकसित मुद्रा तथा पूँजी बाजार का न होना, अनेक प्रकार की वित्तीय प्रणालियां एवं वित्तीय संस्थाओं का मौजूद होना है। इसके अलावा भारतीय रिजर्व बैंक का गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं पर पूर्ण नियन्त्रण न होना एवं बिल बाजार का पूर्णतया विकसित न होना है।

## 5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)

1. भारतीय वित्तीय प्रणाली—कुलदीप गुप्ता एवं डॉ. राजकुमार।

2. भारतीय वित्तीय प्रणाली—टी. आर. जैन एवं ओ. पी. खन्ना।

## 6. नमून के प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. ब्याज दर से क्या अभिप्राय है? मौद्रिक और वास्तविक ब्याज दर के बीच अन्तर बताइए?
(What do you mean by interest rate ? Distinguish between Nominal and Real rate of Interest.)

2. ब्याज दर की संरचना की व्याख्या करो।
(Explain the structure of rate of interest.)

3. भारत के संदर्भ में ब्याज अन्तरों के रूपों तथा स्रोतों का वर्णन करें।
(Give the main forms and sources of interest rate differentials with special references to India.)

4. भारत में प्रशासित ब्याज दरों की वर्तमान प्रणाली में क्या दोष है? भारत में ब्याज दरों के नियमन के लिए क्या कदम उठाए जा सकते हैं?
(What are the deficiencies in the prevailing system of administered interest rate in India ? What steps can be taken to regulate the interest rate in India.)

**Paper : BC-206 (i) Indian Financial System** **Revised by : M.L. Singla**

**Lesson No : 12**

# जोखिम पूँजी VENTURE CAPITAL
# एवं
# CREDIT RATING साख श्रेणीयन

**विषय-सामग्री (Contents)**


1. परिचय (Introduction)
2. उद्देश्य (Objective)
3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)
   - 3.1 जोखिम पूंजी का अर्थ (Meaning of Venture Capital)
     - 3.1.1 जोखिम पूंजी के उद्देश्य (Objectives of Venture Capital)
     - 3.1.2 जोखिम पूंजी के मुख्य लक्षण (Salient Features of Venture Capital)
     - 3.1.3 जोखिम पूंजी के रूप (Forms of Venture Capital)
     - 3.1.4 जोखिम पूंजी के कार्य (Functions of Venture Capital)
     - 3.1.5 जोखिम पूंजी कोष (Venture Capital Fund)
     - 3.1.6 जोखिम पूंजी की कार्य प्रणाली (Process of Venture Capital)
     - 3.1.7 जोखिम पूंजी के लाभ (Advantages Merits of Venture Capital)
     - 3.1.8 जोखिम पूंजीपति निवेश का निर्णय लेते समय क्या मापदण्ड अपनाते हैं ?
   - 3.2 साख श्रेणीयन (Credit Rating)
     - 3.2.1 साख श्रेणीयन का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Credit Rating)
     - 3.2.2 साख श्रेणीयन के कार्य (Functions of Credit Rating)
     - 3.2.3 साख श्रेणीयन के प्रकार (Types of Credit Rating)
     - 3.2.4 साख श्रेणीयन प्रक्रिया में विश्लेषण के प्रकार (Types of Analysis in Credit Rating Proces)
     - 3.2.5 साख श्रेणीयन के लाभ या महत्व (Significance of Credit Rating)
     - 3.2.6 साख श्रेणीयन एजेन्सियों का पंजीकरण (Registration of Credit Rating Agencies)
     - 3.2.7 भारत में साख श्रेणीयन एजेन्सियां (Credit Rating Agencies in India)
     - 3.2.8 श्रेणीयन प्रक्रिया में सुधार हेतु किए गए उपाय (Recent Measures to Reform Rating Process)
4. सारांश (Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Reading)
6. नमूने के प्रश्न (Self-Assessment Questions)

## 1. परिचय (Introduction)

किसी जोखिम वाले नए उपक्रम को शुरू करने के लिए पूंजी उपलब्ध कराई जाती है। उसे जोखिम पूंजी कहा जाता है। जोखिम पूंजी एक नई वित्तीय सेवा है। इसका जन्म उन नीतियां से हुआ है, जिनकी सहायता से नये उद्यमी अपने व्यावसायिक विचारों को व्यवहार में लाते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि एक छोटा उद्यमी जिसके पास उत्साह है, जोश है, व्यावसायिक विचार है, परन्तु पर्याप्त मात्रा में पूंजी नहीं है। उसके वित्तीय विकास के लिए जोखिम पूंजी उसे साधन उपलब्ध कराता है। जोखिम पूंजी उन कम्पनियों में निवेश की जाती है, जो बाजार में बिल्कुल नई हैं।

सबसे पहले जोखिम पूंजी की धरणा का विकास अमेरिका में हुआ था। सन् 1946 में अमेरिकी अनुसंधान और विकास को पहले जोखिम उपक्रम संगठन के रूप में स्थापित किया गया। इस संगठन ने 100 कम्पनियों के लिए लगभग 11 वर्षों तक वित्त का प्रबंध किया। जोखिम पूंजी के उद्गम के उदाहरण यू.के., जापान में भी मिलते हैं।

प्रत्येक व्यावसायिक संस्था एवं सरकार को अपना कार्य सुचारू रूप से करने हेतु वित्त की आवश्यकता होती है। वित्त प्राप्ति के कई साधन हैं, जिनमें एक प्रमुख साधन साखपत्र (Credit Instruments) जैसे— ऋणपत्र, बाण्ड्स, स्थाई जमा, अंश (समता एवं पूर्वाधिकार) आदि जारी करके निवेशकर्ताओं से धन एकत्रित करना या वाणिज्यिक बैंकों या वित्तीय संस्थाओं आदि से ऋण प्राप्त करना है। एक निवेशकर्ता इन साखपत्रों में तभी निवेश करता है, जब उसे यह विश्वास होता है कि उसका निवेश सुरक्षित है तथा समय पर ब्याज, लाभांश और जमा पूंजी वापिस मिल जायेगी अर्थात् निवेशकों की कोशिश रहती है कि अवहेलना, चूक या त्रुटि से होने वाली हानि या जोखिम (Default Risk) को कम से कम या खत्म कर दिया जाये। विभिन्न साखपत्रों की सुरक्षा का स्तर का अनुमान लगाना एक अनुभवी एवं पेशेवर (Professional) व्यक्ति या संस्था का कार्य है। आजकल कई विशिष्ट संस्थाओं द्वारा साखपत्रों या ऋणों की उनकी सुरक्षा एवं जोखिम के स्तर के अनुसार श्रेणीयन/श्रेणीबद्ध करने का कार्य किया जा रहा है। ये संस्थाएँ साखपत्रों या ऋणों को उनकी जोखिम के अनुसार सांकेतिक चिन्ह (Symbolic Indicators) प्रदान करके वह कार्य करती है। जैसे—AAA, AA, A, B आदि। इस प्रकार साखपत्रों या ऋणों को उनकी जोखिम या सुरक्षा के स्तर के आधर पर श्रेणीबद्ध (Grading) करने की विधि को क्रेडिट रेटिंग (Credit Rating) कहा जाता है। क्रेडिट रेटिंग के अन्तर्गत दिए जाने वाले चिन्हात्मक सूचक से ज्ञात होता है कि अमुक साखपत्र या ऋण पर ब्याज या लाभांश तथा मूलधन के भुगतान की कितनी निश्चितता या सम्भावना है।

## 2. उद्देश्य (Objective)

इस पाठ का उद्देश्य आपको जोखिम पूंजी एवं साख श्रेणीयन से अवगत करवाना है। अतः इस पाठ का अध्ययन करने के बाद आप जान सकेंगे कि जोखिम पूंजी की कार्यप्रणाली क्या है? किन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु जोखिम पूंजी का जन्म हुआ? जोखिम पूंजी व्यवसाय की किन-किन अवस्थाओं में वित्त प्रदान करती है? एवं जोखिम पूंजी के लाभ क्या हैं?

इसी प्रकार इस पाठ से दूसरे भाग का अध्ययन करने के बाद आप जान पायेंगे कि साख श्रेणीयन क्या है ? यह किस प्रकार की प्रतिभूतियों एवं संस्थाओं की रेटिंग करती है ? तथा रेटिंग के लिए प्रयोग किए जाने वाले विभिन्न चिन्हों का मतलब क्या है ? तथा भारत में कौन-कौन सी क्रेडिट रेटिंग एजेन्सियां काम कर रही हैं ? और उनका रेटिंग करने का तरीका क्या है ? क्रेडिट रेटिंग के विभिन्न पक्षों को क्या फायदा है और इस प्रकार की रेटिंग का विभिन्न पक्षों खासकर क्रेडिट रेटिंग करवाने वाली संस्था को क्या हानि हो सकती है ?

## 3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)

इस अध्याय में जोखिम पूंजी और क्रेडिट रेटिंग से सम्बन्धित विषयों की नीचे दिए गए शीर्षकों के अन्तर्गत व्याख्या की गई है—

### 3.1 जोखिम पूंजी का अर्थ (Meaning of Venture Capital)

जोखिम पूंजी एक ऐसा दीर्घकालीन शेयर वित्त है, जो ऊँची आय की संभावना वाली जोखिम परियोजना में निवेश किया जाता है। इससे उद्यमी तथा जोखिम पूंजीपति (निवेशक) के बीच एक साझेदारी स्थापित हो जाती है, जो एक नव प्रवर्तन को संस्थान बनाने का प्रयास करती है। जोखिम पूंजीपति उन उद्यमियों की सहायता करता है, जिनके पास अच्छी सुदृढ़ परियोजना तो है, लेकिन उसे लागू करने के लिए वित्तीय साधनों की कमी है। ऐसी परियोजनाओं में जोखिम की मात्रा बहुत अधिक होती है। अगर ऐसी परियोजना सफल हो जाती है, तो ऊँची आय प्रदान करती है।

परिभाषा के आधर पर जोखिम पूंजी को सृजनात्मक पूंजी के पक्ष में समझा जाता है। और इससे ऐसे आर्थिक कार्यों को करने की अपेक्षा की जाती है, जो दूसरे निवेश साधनों से भिन्न हैं। जोखिम पूंजी उन नई धरणाओं को कोषित करने का वह शेयर समर्थन है। जिनमें बहुत अधिक जोखिम होता है, परन्तु साथ ही ऊँचे विकास एवं लाभ की संभावना होती है।

" Venture Capital is equity support to fund concepts that involve a higher risk and at the same time, have high growth and profit potential."

दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जोखिम पूंजी का सम्बन्ध उन अवसरों को खोजने से होता है जिससे बेकार पड़े साधनों का सही दिशा में प्रयोग किया जा सके और लम्बे समय तक निरन्तर आय प्राप्त की जा सके। अतः जोखिम पूंजी का उद्देश्य व्यवसायियों और लघु तथा मध्यम उद्यमियों की वित्त उपलब्धता के वचन के साथ नये उद्यम शुरू करने में सहायता करना है।

संक्षेप में जोखिम पूंजी साहसी उद्यमियों को यह अवसर देता है कि वे निर्जीव साधनों को जोखिम भरे नए उद्यम में प्रयोग करके दीर्घकाल में निरन्तर अच्छी आय प्राप्त करते रहें। जोखिम पूंजी का सम्बन्ध मुख्यतया नई परियोजनाओं, बीज पूंजी, प्रौद्योगिकी तथा नव प्रवर्तन से होता है।

#### 3.1.1 जोखिम पूंजी के उद्देश्य (Objectives of Venture Capital)

1. यह नये उद्यमियों की अभिलाषाओं तथा स्वप्नों को व्यावहारिक पत्र प्रदान करती हैं।
2. यह आशावादी व्यावसायिक उपक्रम को जन्म देती है।
3. यह नये उद्यमियों के निर्णायक विचारों को व्यावहारिक पत्र देती है।
4. उद्यमीय दृष्टि निर्माण में सहायक है।
5. यह उद्यमियों को सहभागिता और साझेदारी प्रदान करके रोमांचक सफलता प्राप्त करने में सहायक होती है।
6. संसाधनों के प्रवाह को नियमित करके उद्यमियों को साहस एवं दूरदर्शिता प्रदान करती है।

### 3.1.2 जोखिम पूंजी के मुख्य लक्षण (Salient Features of Venture Capital)

1. यह अत्यधिक जोखिम पूर्ण उपक्रम है। विकसित देशों में इसकी सफलता दर 60 प्रतिशत है जबकि भारत जैसे विकासशील देशों में यह दर 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक होने की सम्भावना है।
2. यह उच्च तकनीकी परियोजनाओं को वित्त प्रदान करता है।
3. जोखिम पूंजी निवेश से आय औसतन चार या पाँच वर्षों बाद प्राप्त होती है।
4. जोखिम पूंजीपति सहायक इकाइयों को प्रबन्ध एवं विपणन सम्बन्धी सहायता भी उपलब्ध कराता है।
5. किसी सहायता प्राप्त कम्पनी के लाभ कमाने के एक निश्चित स्तर पर पहुंचन पर जोखिम पूंजीपति अपने शेयरों को स्टॉक मार्किट में ऊँचे प्रीमियम पर बेच देता है और जोखिम पूंजीपति वहाँ से अपने कोषों को निकालकर किसी अन्य उपक्रम में लगाता है।
6. जोखिम पूँजीपति अपनी पूंजी पर ब्याज नहीं लेता, बल्कि सशर्त ऋण देता है और कम्पनी की बिक्री से रायल्टी लेता है। रायल्टी की दर व्यवसाय की लाभदायकता की दर पर निर्भर करती है।
7. यह निवेश का एक शेयर या आभास शेयर पर है।
8. यह एक दीर्घकालीन निवेश है, इससे आय पूंजीगत लाभ (Capital Gains) के पक्ष में होती है।
9. इसमें निवेशकर्ता उपक्रम के प्रबन्ध में सक्रिय पक्ष से शामिल होता है।

### 3.1.3 जोखिम पूंजी के पक्ष (Forms of Venture Capital)

उपक्रम के विकास के विभिन्न स्तरों के आधार पर जोखिम पूंजी वित्त व्यवस्था को मुख्यत: चार भागों में बांटा जा सकता है—

1. **मूल वित्त (Seed Finance)**—व्यवसाय के प्रथम चरण में जोखिम की मात्रा बहुत अधिक होती है। जहाँ उद्यमी अपने व्यावसायिक विचार को व्यावहारिक रूप देना चाहता है। इस चरण में सोची हुई धरणा को सही सिद्ध करने के लिए वित्त की छोटी राशि की आवश्यकता होती है जिसे मूल या बीज वित्त कहा जाता है।
2. **प्रारम्भ वित्त (Start up Capital)**—दूसरे चरण में सोची गई धरणा को कार्यान्वित (Implement) करने की आवश्यकता होती है। इस चरण में वस्तु विकास एवं वस्तु बिक्री के लिए वित्तीय कोषों की व्यवस्था की जाती है। जब फर्म प्रारम्भिक पूंजी निवेश कर चुकी होती है तो उसे अपनी बिक्री और विनिर्माण (Manufacturing) के लिए अतिरिक्त वित्त की आवश्यकता होती है।
3. **शुरुआती वित्त (Beginner's Finance)**—तीसरे चरण में व्यवसायी व्यापारिक उत्पादन को शुरू करता है। अत: उसे उत्पाद की बिक्री तथा अन्य आधारिक संरचना के विकास के लिए शुरुआती वित्त की आवश्यकता होती है। इस वित्त की आवश्यकता फर्म को तब अधिक होती है जब वह सम विच्छेद बिन्दु पर होती है, परन्तु अपने व्यवसाय के विस्तार के बारे में सोच रही होती है।
4. **स्थापना वित्त (Establishment Finance)**—जब व्यवसाय चौथे चरण में पूरी तरह से स्थापित हो जाता है, तब फर्म को इसके विकास और विस्तार के लिए वित्त की आवश्यकता होती है ताकि

वह बड़े पैमाने की बचतों का पूरा लाभ उठा सके। फर्म इस स्थापना वित्त को भी जोखिम पूंजी से प्राप्त करती है।

### 3.1.4 जोखिम पूंजी के कार्य (Functions of Venture Capital)

जोखिम पूंजी व्यापक और उपयोग की गई सम्भावनाओं की खोज करके किसी भी देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं—

1. **वित्त तथा कौशल उपलब्ध कराना (To Provide Finance as well as skills)**— जोखिम पूंजी नये उद्यमों एवं उच्च तकनीक पर आधारित उद्यमों को वित्त तथा कौशल उपलब्ध करवाती है। व्यवसाय शुरू करने के पहले चरण से लेकर अन्तिम चरण तक पूंजी उपलब्ध कराती है। पहले चरण में बीज वित्त, दूसरे चरण में प्रारम्भ वित्त, तीसरे चरण में शुरुआती वित्त तथा विकास चरण में जोखिम पूंजीपति व्यवसाय योजना को विकसित करता है तथा तकनीकी नव प्रवर्तन के आन्तरिक लाभ तथा हानि का अनुमान लगाता है, वह इस बात को सुनिश्चित करता है कि प्रवर्तन बाजार अवसरों एवं सम्भावनाओं के अनुप है या नहीं। फिर इस बात से सन्तुष्ट होने का प्रयास करता है कि उच्च प्रबन्धकीय टीम व्यवसाय योजना के लक्ष्यों की प्राप्ति करने में सक्षम है या नहीं। अत: जोखिम पूंजीपति की भूमिका केवल वित्त देने वाली की ही नहीं होती, बल्कि अनेक प्रकार के कौशल एवं विशिष्ट सेवाएं प्रदान करने की भी है।

2. **व्यवसायी के कोषों की कमी की पूर्ति (Fill the Gap in Owner's Funds)**—नये व्यवसाय के सही परिचालन के समर्थन में किसी व्यवसाय के स्वामी को वित्त की जो कमी रह जाती है जोखिम पूंजी उनकी पूर्ति करता है। इसलिए जोखिम पूंजी फर्मों को उच्चतम उपलब्धि प्राप्त करने में उत्प्रेरक की भूमिका निभाती है।

3. **पर्याप्त बैंकिंग सहायता (Adequate Banking Help)**—जोखिम पूंजीपति का कार्य इस बात का भी ध्यान रखना है कि क्या फर्म को उचित और पर्याप्त बैंकिंग सुविधा उपलब्ध हो रही है या नहीं।

4. **योग्य व्यक्ति की खोज करना (To Locate Outstanding Persons)**—जोखिम पूंजीपति ऐसे उद्यमियों को ऐसे योग्य, दक्ष एवं कार्यकुशल व्यक्तियों को ढूंढने, साक्षात्कार करने तथा काम दिलाने में भी सहायता करता है, जो फर्म को व्यावसायिक रूप दे सकने में सक्षम हो।

वित्तीय संस्थाएं विभिन्न रूपो में जैसे—परियोजना ऋण, शेयर, सशर्त ऋण, मार्गदर्शन सेवा जैसे प्रौद्योगिकी सूचना सेवा, जोखिम पूंजी सहायता प्रदान करती है। जोखिम पूंजी का अनिवार्य उद्देश्य किए गए निवेश पर उच्चतम आय प्राप्त करना है। इसकी भूमिका केवल विनिर्माण उद्योगों तक ही सीमित नहीं है। यू. के. में जोखिम पूंजी का प्रयोग अन्य नए-नए उपक्रमों में भी किया जाता है। जैसे कि विशिष्ट पुस्तकों का प्रकाशन, पुराने पुनर्निर्मित आभूषण, सेवानिवृत रिहायशी मकान आदि। भारत में जोखिम पूंजी उन्नत तकनीक वाले उद्यमों को प्रोत्साहन देने में उत्प्रेरक भूमिका निभा सकती है।

### 3.1.5 जोखिम पूंजी कोष (Venture Capital Fund)

जोखिम पूंजी कोष से अभिप्राय उन कोषों से है जो किसी कम्पनी के भावी विकास को ध्यान में रखकर निवेश किए जाते हैं। ये कम्पनी की आरम्भिक अवस्था में निवेश करते हैं। जोखिम पूंजी कोष कम्पनी की सही स्थापना, उसके विस्तार, उसके उत्पादों की बिक्री तथा बाजार शेयर विकास में भी पूर्ण सहायता प्रदान करते हैं। निवेश करने से पहले जोखिम पूंजीपति प्रस्तावित कम्पनी के तकनीकी एवं व्यावसायिक

पहलू की सही जांच पड़ताल करते हैं, क्योंकि प्रारम्भिक चरणों में जोखिम की मात्रा अधिक होती है। इसलिए जोखिम पूंजीपति कोष उपलब्ध करवाने के साथ-साथ प्रबन्धकीय गुणवत्ता की ओर भी विशेष धयान देते हैं। इस संदर्भ में जोखिम पूंजी कोष मैनेजर दो बातों को ध्यान से देखता है।

1. क्या उद्यमी दूरदर्शी है।
2. क्या प्रबन्धकीय टीम सामंजस्यपूर्ण है।

### 3.1.6 जोखिम पूंजी की कार्य प्रणाली (Process of Venture Capital)

जब किसी कम्पनी के प्रारम्भकर्ता को अपने किसी नये उत्पाद या प्रक्रिया के विचार को व्यावहारिक रूप देने के लिए ऐसे किसी वित्तीय समर्थक की आवश्यकता होती है, जो उसे प्रदान करे। उस समय बैंक उसे कई कारणों से ऋण देने में असमर्थ होता है, जैसे उत्पाद अपरीक्षित है। बिक्री की कठिनाइयां तथा उद्यमी के रूप में सफल होने को रिकार्ड न होना आदि। ऐसी स्थिति में उसे वित्त प्रदान करने के लिए जोखिम पूंजीपति ही आगे आता है। समझौते के अनुसार वह उसे इस विश्वास के साथ ऋण देता है कि यदि प्रस्तावित उद्यम सफल हो जाता है तो वह अपने उद्यम के शेयर की प्रारम्भिक सार्वजनिक पेशकश (IPO-Initial Public Offer) करेगा। उद्यम जितना ज्यादा सफल होगा, संवर्धक और जोखिम पूंजीपति को आगे चलकर उतना ही अधिक लाभ होगा।

**प्रचालन स्कीमें (Schemes in Operations)**

एक जोखिम पूंजीपति मुख्य रूप से उन्हीं योजनाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करता है, जिनके निम्नलिखित उद्देश्य हों—

1. देशी प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहन देना तथा उसे व्यापारिक रूप में लागू करना।
2. आयातित प्रौद्योगिकी को इस प्रकार अपनाना एवं संशोधित करना कि वह भारतीय परिस्थितियों में उपयुक्त हो।

जोखिम पूंजी नई परियोजना स्थापित करने के लिए नव प्रवर्तनों, आधुनिकीकरण एवं प्रौद्योगिकी को विकसित करने के लिए तथा बाजार को प्रोन्नत करने वाले कार्यक्रमों की लागत को पूरा करने के उद्देश्य से दी जाती है। जोखिम पूंजी उन उद्योगों के लिए वित्त का प्रबन्ध नहीं करती जो ट्रेडिंग, दलाली, निवेश, वित्तीय सेवायें या सम्पर्क कार्य करते हैं।

भारत में जोखिम पूंजी मुख्यतः तीन रूपों में उपलब्ध है—शेयर, सशर्त, ऋण एवं आय नोट। आय नोट भारत में उपलब्ध जोखिम पूंजी का नया मार्ग है। यह दोहरी सुरक्षा प्रदान करता है, जिसमें पारस्परिक और सशर्त ऋणों का मिश्रण है। इसमें उद्यमी को ब्याज और रायल्टी दोनों देने पड़ते हैं। भारत की कई निजी क्षेत्र की जोखिम पूंजी कम्पनियों ने क्षेत्र विशेष और उद्योग विशेष जोखिम कोष शुरू किये हैं।

### 3.1.7 जोखिम पूंजी के लाभ (Advantages/Merits of Venture Capital)

जोखिम पूंजी ने उद्यमवाद और प्रौद्योगिकी नवप्रवर्तन के प्रोत्साहन, में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। लोगों ने अपने पास वित्तीय साधन न होते हुए भी अपने विचारों को जोखिम पूंजी की सहायता से व्यावहारिक रूप से लागू किया है और कई ऐसे छोटे व्यवसाय स्थापित किये गए हैं जिनसे पूरे विश्व में बायो-टैक्नोलॉजी, कम्प्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी आदि अनेक क्षेत्रों का विकास हुआ है जोखिम पूंजी के निम्नलिखित लाभ हैं।

1. **अर्थव्यवस्था प्रेरक (Economy Oriented)**

    1. यह देश के औद्योगिकरण में सहायता प्रदान करती है।
    2. देश के औद्योगिक विकास में सहायक है।
    3. उद्यमियों के कौशल तथा निपुणता में वृद्धि करती है।

2. **निवेशक प्रेरक (Investor Oriented)**— यह निवेशकों का जोखिम कम करती है एवं उन्हें लाभ प्रदान करती है क्योंकि निवेशकों को निवेश करने के लिए तभी आमन्त्रित किया जाता है जब कम्पनी लाभ अर्जित करना शुरू कर देती है। अत: इससे पूंजी बाजार का स्वस्थ विकास सम्भव हो जाता है।

3. **उद्यमी प्रेरक (Entrepreneur Oriented)**—यह प्रथम पीढ़ी के उद्यमियों को अपने विचारों को वास्तविकता में परिणित करने में सहायता देती है। जिससे देश में उद्यमवृत्ति को बढ़ावा मिलता है।

    भारत में जोखिम पूंजी उद्योग को मुख्यत: ICICI, IDBI, UTI, SBI, कैनरा बैंक जैसी वित्तीय संस्थाओं तथा बैंकों ने प्रायोजित किया है।

### 3.1.8 जोखिम पूंजीपति निवेश का निर्णय लेते समय क्या मापदण्ड अपनाते हैं ?

वे मुख्यत: निम्नलिखित बातों का ध्यान रखते हैं—

1. प्रबन्धकीय टीम की निष्ठा, प्रतिबद्धता तथा उद्यमशीलता जैसे महत्वपूर्ण तत्वों को धयान में रखा जाता है।
2. उद्यमी तथा उसकी प्रबन्धकीय टीम के पुराने रिकार्ड की जांच पड़ताल की जाती है।
3. परियोजना से सम्बन्धित तकनीकी निष्पादन संबंधी मान्यताओं की ओर ध्यान दिया जाता है।
4. तेजी से बढ़ रहे बाजार अवसरों को ध्यान में रखा जाता है।
5. औसत लाभदायकता से अधिक आय प्राप्ति की सम्भावना को ध्यान में रखा जाता है। ताकि आने वाले 5-7 वर्षों में अच्छी आमदनी हो सके।

जोखिम पूंजी कम्पनियों तथा कोषों के पास कम से कम 10 करोड़ रुपये होने चाहिए। जिसमें विदेशी भागीदारी 25 प्रतिशत तक हो सकती है जबकि गैर–स्वदेश वापसी आधार पर अप्रवासी भारतीय की भागीदारी 74 प्रतिशत तक हो सकती है। परन्तु स्वदेश वापसी आधार पर यह अनुपात 25 से 40 प्रतिशत तक ही है। इस समय भारत में लगभग 20 जोखिम पूंजी कम्पनियाँ सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र दोनों क्षेत्रों में काम कर रही है। इन कम्पनियों ने 550 परियोजनाओं के लिए 450 करोड़ रुपया उपलब्ध कराया। सच बात तो यह है कि जोखिम पूंजी उद्यमवृत्ति की अग्रदूत है। इसमें लोचशीलता का अंश पाया जाता है। कई विकसित देशों में इस प्रकार की वित्त व्यवस्था को काफी मात्रा में कर प्रेरणा भी मिलती है।

## 3.2 साख श्रेणीयन (Credit Rating)

### 3.2.1 साख श्रेणीयन का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Credit Rating)

साख श्रेणीयन एक श्रेणीकरण सेवा है, जो निवेशकों को अपना जोखिम कम करने में सहायता करती है। यह एक ऐसी तकनीक है, जिसमें कम्पनी के विभिन्न संसाधनों की शक्तियों एवं कमजोरियों के

आधार पर साखपत्रों का सापेक्षिक श्रेणीकरण किया जाता है। साख श्रेणीयन के लिए वित्तीय विवरणों के विश्लेषण एवं प्रोजेक्ट विश्लेषण के साथ-साथ साख तत्वों तथा भविष्य की सम्भावनाओं का भी आंकलन किया जाता है।

### साख श्रेणीयन की परिभाषाएँ (Definitions of Credit Rating)

V. A. Avadhani के अनुसार, ''श्रेणीयन आवश्यक रूप से ऋण प्रतिभूति के निर्गमनकर्ता की समय पर ऋण दायित्वों का पूरा भुगतान करने की सापेक्षिक इच्छा तथा क्षमता के आधार पर एजेन्सी द्वारा दिया जाने वाला विशेषज्ञ का मत है।''

"Credit Rating is initially giving an expert opinion by a rating agency on the relative willingness and ability of the issuer of a debt instruments to meet the debt servicing obligation in time and in full."

क्रेडिट रेटिंग विशिष्ट, निपुण एवं ख्याति प्राप्त संस्थानों द्वारा की जाती है। यह मुख्यत: ऋण यन्त्रों (Debt Instruments) तक ही सीमित है परन्तु समता अंशों को भी रेट करने के प्रयास किए गए हैं। क्रेडिट रेटिंग यद्यपि पूरी संस्था, निगर्मक (Issuers) की शक्ति (Strength) कार्यों की तर्क संगतता, प्रबन्ध की गुणवत्ता, संगठनात्मक व्यवहार और संयुक्त निष्पादन (Composite Performances) को प्रतिबिम्बित करती है।

### 3.2.2 साख श्रेणीयन के कार्य (Functions of Credit Rating)

साख श्रेणीयन के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं—

क्रेडिट रेटिंग का आधरभूत उद्देश्य निवेशक को उसके जोखिम आय सन्तुलन के सम्बन्ध में निर्णय लेने के लिए उत्कृष्ट और कम लागत की सूचनाएं प्रदान करना है। यह दूसरे बाजार प्रतिभागियों (Other Market Participants) को भी अन्य तरीकों से मदद करती है जैसे—

1. यह संस्थागत निवेश पर सार्वजनिक दिशा निर्देशों को सुगम बनाती है।
2. यह सौदागर बैंकरों, दलालों और नियन्त्रण अधिकारियों आदि को ऋण निर्गमन के सम्बन्ध में उनके कार्यों को पूरा करने में मदद करती है।
3. ऋणी पर स्वस्थ अनुशासन (Healthy Discipline) का आरोपण करती है।
4. वित्तीय और दूसरे प्रतिनिधियों को विश्वास दिलाती है।
5. सूचना प्रकटीकरण, बेहतर लेखांकन मानकों और सुधरी हुई (Improved) वित्तीय सूचनाओं को बढ़ावा देती है जो निवेशकों की सुरक्षा (Investor Protection) में मदद करती है।
6. ऊँची रेटिंग वाली कम्पनियों की ब्याज लागत (Interest Cost) को कम कर सकती है।
7. एक विपणन हथियार के रूप में निगर्मक की बहुत मदद करती है।

### 3.2.3 साख श्रेणीयन के प्रकार (Types of Credit Rating)

1. ऋणपत्र व बाँड रेटिंग (Bond/Debenture Rating)
2. वाणिज्य पेपर श्रेणीयन (Commercial Paper Rating)

3. समता अंश श्रेणीयन (Equity Share Rating)

4. स्थाई जमा श्रेणीयन (Fixed Deposit Rating)

5. उधर लेने वालों का श्रेणीयन (Borrowers Rating)

6. व्यक्तिगत श्रेणीयन (Individual Rating)

### 3.2.4 साख श्रेणीयन प्रक्रिया में विश्लेषण के प्रकार (Types of Analysis in Credit Rating Process)

1. **व्यवसाय का विश्लेषण (Business Analysis)**—इसमें उद्योग का जोखिम, विपणन जोखिम, कार्य करने की कुशलता एवं वैधानिक स्थिति आदि का आंकलन शामिल है।

2. **वित्तीय विश्लेषण (Financial Analysis)**—इसमें निम्नलिखित की जांच पड़ताल शामिल है—

   (i) लेखा कर्म विशेषता (Accounting Quality)

   (ii) पर्याप्त नकद प्रवाह (Adequacy of Cash Flows)

   (iii) प्रबन्ध मूल्यांकन (Management Evaluation)

   (iv) आय संरक्षण (Earnings Protection)

3. **आधारभूत विश्लेषण (Fundamental Analysis)**—

   (i) तरलता का प्रबन्ध (Liquidity Management)

   (ii) लाभदायकता का विश्लेषण (Profitability Analysis)

   (iii) ब्याज तथा कर दरें (Interest and Tax Rates)

### 3.2.5 साख श्रेणीयन के लाभ या महत्व (Significance of Credit Rating)

क्रेडिट रेटिंग निवेशकर्त्ताओं, कम्पनियों, वित्तीय मध्यस्थों तथा सरकार सभी के लिए उपयोगी है।

1. **दिवालिया कम्पनियों से बचाव (Safeguard from Bankrupt Companies)**—रेटिंग के कारण निवेशकर्ता ऐसी कम्पनियों में निवेश करने से बच जाते हैं जिनकी रेटिंग निम्न श्रेणी की होती है तथा जिनके दिवालिया होने की सम्भावना अधिक होती है। अत: क्रेडिट रेटिंग के कारण निवेशकर्त्ताओं को कम्पनी की आर्थिक स्थिति का ज्ञान हो जाता है।

2. **समय, ऊर्जा तथा साधनों की बचत (Saving of Time, Energy and Resources)**—रेटिंग के फलस्वरूप निवेश की सुरक्षा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए निवेशकर्त्ताओं को अधिक समय, ऊर्जा या साधनों को व्यय करने की आवश्यकता नहीं होती। वह रेटिंग चिन्हों से निवेश सुरक्षा का आसानी से अनुमान लगा सकता है।

3. **कम कीमत पर उधार (Lower Cost of Borrowing)**—जिस कम्पनी की रेटिंग उच्च्व श्रेणी की होती है। उनकी साख पर लोगों को अधिक विश्वास होता है। क्योंकि उन कम्पनियों में निवेश अधिक सुरक्षित होते हैं, इसलिए निवेशकर्त्ता ऐसी कम्पनियों में ब्याज की कम दर भी निवेश करने को तैयार रहते हैं।

4. **विदेशी सहयोग की अधिक सम्भावना (More Chances of Foreign Collaborations)**—जिस कम्पनी की रेटिंग उच्च श्रेणी की होती है। उनकी आर्थिक स्थिति अधिक मजबूत होती है, इसलिए विदेशी लोग भी ऐसी कम्पनी के साथ सहयोग करना पसन्द करेंगे।

5. **सरकार को लाभ (Benefits to Government)**—क्रेडिट रेटिंग का सरकार को भी लाभ प्राप्त होता है उचित और विश्वसनीय रेटिंग लोगों को बचत करने के लिए प्रोत्साहित करेगी। क्योंकि लोग जोखिमपूर्ण निवेश करने से बच जाते हैं, इसलिए जोखिमपूर्ण निवेश के कारण जो हानि जनता को होने की सम्भावना होती है, उसके लिए सरकार का उत्तरदायित्व कम हो जाता है। सरकार को क्रेडिट रेटिंग के कारण सार्वजनिक क्षेत्र की वित्तीय संस्थाओं से सम्बन्धित उचित नीतियों का निर्माण एवं उनके मूल्यांकन करने में सुविधा हो जाती है।

6. **वित्तीय मध्यस्थों को लाभ (Benefits to Financial Inter-Mediaries)**—जिन कम्पनियों की क्रेडिट रेटिंग उच्च श्रेणी की होती है, उनके साख पत्रों की बिक्री के लिए कम प्रयत्न करने पड़ते हैं, जिन कम्पनियों की रेटिंग अच्छी होती है उनकी वित्तीय स्थिति मजबूत होती है और निवेश की सुरक्षा पायी जाती है। अत: ऐसी कम्पनियों में निवेश के लिए दलालों को कम मेहनत करनी पड़ती है तथा उनके समय और धन की बचत होती है।

**साख श्रेणीयन की हानियाँ (Disadvantages of Credit Rating)**

यदि किसी कम्पनी की क्रेडिट रेटिंग की गुणवत्ता उच्चतम श्रेणी की नहीं है, तो उसे कई प्रकार की हानियों का सामना करना पड़ सकता है जैसे—

1. **पक्षपातपूर्ण रेटिंग (Biased Rating)**—यदि रेटिंग पक्षपातपूर्ण की जायेगी तो लाभ की बजाए हानि होगी। क्योंकि उस रेटिंग से कम्पनी की सही स्थिति प्रकट नहीं होती। जनता धोखे में रहती है। वह ऐसी रेटिंग को सही मानकर ऐसी कम्पनियों में निवेश कर देती है, जो दिवालिया हो जाती है, इसलिए जनता का विश्वास कम हो जाता है, इसी प्रकार जिन कम्पनियों की श्रेणीयन निम्न होता है, वे उसका प्रचार नहीं करते। अत: लोगों को इन कम्पनियों के बारे में जानकारी नहीं मिलती और वे उनमें निवेश कर देते हैं और उन्हें हानि उठानी पड़ती है। इसलिए सरकार को ऐसी निम्न श्रेणीयन वाली कम्पनियों की रेटिंग का प्रचार करना चाहिए।

2. **कम्पनी की वित्तीय स्थिति की पूर्ण जानकारी का अभाव (Lack of Complete Knowledge about Financial Position of a Company)**—क्रेडिट रेटिंग द्वारा केवल ऋण दायित्वों के रेटिंग की जाती है, उस कम्पनी की सम्पूर्ण वित्तीय स्थिति का ज्ञान नहीं होता और ऐसा भी हो सकता है कि कम्पनी के एक विशेष ऋण उपक्रम की रेटिंग बहुत ऊँची हो सकती है जबकि कम्पनी की सम्पूर्ण स्थिति खराब हो सकती है। अत: लोग उच्च श्रेणी की रेटिंग देखकर जो निवेश करेंगे, वह असुरक्षित होगा तथा निवेशकर्त्ताओं को हानि उठानी पड़ सकती है।

3. **अगतिशील अध्ययन (Static Study)**—एक कम्पनी की रेटिंग ऐतिहासिक या वर्तमान तथ्यों पर आधारित होती है। भविष्य के बारे में इससे सम्पूर्ण जानकारी नहीं मिलती। एक उच्च श्रेणी की रेटिंग वाली कम्पनी का भविष्य कैसा होगा, वर्तमान में उसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। निवेशकर्त्ता को भविष्य में हानि उठानी पड़ सकती है। इसलिए क्रेडिट रेटिंग का सबसे बडा़ नुकसान यह है कि ये प्रणाली अगतिशील है। भविष्य में क्या परिवर्तन होंगे, इनका पूरा ज्ञान नहीं होता।

### 3.2.6 साख श्रेणीयन एजेन्सियों का पंजीकरण (Registration of Credit Rating Agencies)

**(A) प्रमाण पत्र के लिए आवेदन (Application for Grant of Certificate)—**

1. यदि कोई व्यक्ति श्रेणीयन एजेन्सी के रूप में कोई कार्य करना चाहता है, तो वह इस उद्देश्य से पंजीकरण के लिए बोर्ड में आवदेन करेगा।

2. **साख श्रेणीयन एजेन्सी के प्रवर्तक (Promoters of Credit Rating Agency)**—नियम 3 के अनुसार बोर्ड तब तक आवेदन पत्र स्वीकार नहीं करेगा जब तक आवेदन का समर्थन ऐसा व्यक्ति नहीं करता, जो निम्नलिखित में से किसी वर्ग से सम्बन्ध रखता हो—

   (i) एक सार्वजनिक वित्तीय संस्था

   (ii) एक अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक

   (iii) एक विदेशी बैंक, जो भारत में रिजर्व बैंक की स्वीकृति द्वारा कार्य कर रहा हो।

   (iv) एक विदेशी साख श्रेणीयन एजेन्सी, जिसे कुछ समय के लिए कानूनी मान्यता दी गई हो।

3. **योग्यता की कसौटी (Eligibility Criteria)**—नियम 3 के अनुसार बोर्ड तब तक पंजीकरण के लिए दिए गए आवेदन पत्र को स्वीकार नहीं करेगा, जब तक आवेदक निम्नलिखित शर्तों को पूरा नहीं करता—

   (i) आवेदक कम्पनी अधिनियम 1956 के अधीन कम्पीन के रूप में स्थापित एवं पंजीकृत हो।

   (ii) आवेदक के पार्षद सीमा नियम में निर्धारित श्रेणीयन क्रिया ही उसका मुख्य लक्षण है।

   (iii) आवेदक की न्यूनतम शुद्ध पूंजी पांच करोड़ रुपये हो।

   (iv) आवेदक के पास मूलभूत ढांचा पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए, ताकि वह अधिनियम के नियमों एवं प्रावधानों के अनुसार श्रेणीयन सेवाएँ प्रदान करने में सफल हो। आवेदक को अपने रोजगार में पर्याप्त पेशेवर या अन्य इससे जुड़े अनुभव होने चाहिए।

4. **अपेक्षाओं की पुष्टि के लिए आवेदन (Application to conform to the Requirements)—**

   (i) पंजीकरण प्रमाण-पत्र के लिए दिया गया कोई भी आवेदन-पत्र जो हर तरह से पूरा नहीं है, या नियम 5 की अपेक्षाओं या Form (A) में निर्धारित शर्तों को पूरा नहीं करता, बोर्ड द्वारा अस्वीकृत कर दिया जाएगा।

   (ii) आवेदन पत्र अस्वीकृत करने से पहले आवेदक को बोर्ड द्वारा लगाई गई आपत्तियों को 30 दिन के अन्दर दूर करने का अवसर दिया जाएगा।

5. **सूचनाएँ देना, स्पष्टीकरण या व्यक्तिगत प्रतिनिधित्व करना (Furnishing of Information, Clarification and Personal Representation)—**

   बोर्ड द्वारा आवेदक से ऐसी सूचनाओं व स्पष्टीकरण की अपेक्षा की जा सकती है, जो कि आवेदन पत्र पर कार्यवाही करने के लिए बोर्ड को अनिवार्य लगे।

   यदि बोर्ड को यह लगे कि प्रमाण पत्र जारी करने के सम्बन्ध में आवेदक का व्यक्तिगत रूप से हाजिर होना जरूरी है, तो बोर्ड आवेदक या इसके अधिकृत प्रतिनिधि को बोर्ड में हाजिर होने के लिए कह सकता है।

**B. प्रमाण पत्र जारी करना (Grant of Certificate)—**

(i) यदि कोई सन्तुष्ट हो जाए कि आवेदक प्रमाण पत्र के योग्य है तो वह Form B के अनुसार प्रमाण पत्र जारी कर देगा।

(ii) पंजीकरण प्रमाणपत्र के लिए दूसरी तालिका के भाग 1 निर्धारित शुल्क भाग B में बताए गए तरीके से देना होगा।

**C. प्रमाण पत्र की शर्तें तथा वैधता अवधि (Conditions of Certificate and Validity Period)**

नियम 8 के अन्तर्गत दिए गए प्रमाणपत्र की यह शर्त है कि साख श्रेणीयन एजेन्सी, अधिनियम के प्रावधानों, इसके अन्तर्गत बनाए गए नियमों एवं निर्देशों, दिशासूचकों तथा बोर्ड द्वारा समय-समय पर श्रेणीयन से सम्बन्धित जारी किए गए सर्कूलरों तथा संकेतों का पालन करेगी और पंजीकरण प्रमाणपत्र की वैधता की अवधि 3 वर्ष होगी।

**D. प्रमाण पत्र का नवीनीकरण (Renewal of Certificate)**

यदि साख श्रेणीकरण एजेन्सी अपने पंजीकरण प्रमाण पत्र का नवीनीकरण करवाना चाहती है, तो उसे बोर्ड में नवीनीकरण के लिये आवेदन दूसरी तालिका में निर्धारित नवीनीकरण शुल्क के साथ देना होगा। यह आवेदन प्रमाण पत्र की वैधता अवधि समाप्त होने से कम से कम 3 महीने पहले देना होगा, जैसा कि इस नियम के उपनियम 2 से निर्धारित किया गया है।

### 3.2.7 भारत में साख श्रेणीयन ऐजेन्सियां (Credit Rating Agencies in India)

भारत में चार साख श्रेणीयन एजेन्सियाँ हैं। ये निम्नलिखित हैं—

### A. भारतीय साख श्रेणीयन सूचना सेवा लिमिटेड
### (CRISIL) Credit Rating Information Services of India Ltd.)

इसकी स्थापना जनवरी 1988 में ............... तथा एशियन विकास बैंक द्वारा संयुक्त रूप से भारत में पहली साख श्रेणीयन एजेन्सी के रूप में की गई।

इस एजेन्सी का उद्देश्य कम्पनी द्वारा प्रार्थना किए जाने पर ऋण पत्रों, स्थाई जमा, अल्पकालीन ऋण संसाधनों तथा कम्पनियों के पूर्वाधिकार अंशों का श्रेणीयन करना है। बैंक, भारतीय यूनिट ट्रस्ट, सौदागर बैंकर आदि भी कम्पनियों की सहायता करते समय श्रेणीयन की अपेक्षा करते हैं।

श्रेणीयन के लिए प्रयोग किए जाने वाले चिन्ह तथा उसके अर्थ निम्न प्रकार हैं—

| **ऋणपत्र श्रेणीयन (Debenture Rating)** | **तात्पर्य (Implications)** |
|---|---|
| तीन अ - अ अ अ AAA | उच्चतम सुरक्षा |
| दो अ - अ अ (AA) | उच्च सुरक्षा |
| एक अ - अ (A) | पर्याप्त सुरक्षा |
| तीन ब - ब ब ब (B B B) | संतुलित सुरक्षा |

इसी प्रकार पूर्वाधिकार अंशों के लिए 'PF' चिन्ह निर्धारित किया गया है और स्थाई जमा और अल्पकालीन संसाधनों के लिए क्रमश: 'F' तथा 'P' चिन्ह निर्धारित किए गए हैं।

### C. भारतीय निवेश सूचना एवं साख श्रेणीयन एजेन्सी लिमिटेड (Instrument Information and Credit Rating Agency of India Ltd ICRA)

ICRA एक स्वतंत्र पेशेवर कम्पनी है जोकि निवेश सूचना एवं साख श्रेणीयन सम्बन्धी सूचनाएँ प्रदान करनी है। ICRA ने भारतीय पूँजी बाजार के विकास एवं वैश्वीकरण के लिए सक्रिय रूप से प्रतिक्रिया की है, जिससे पेशेवर साख जोखिम विश्लेषण की मांग में अत्याधिक तेजी आई। इसने साख सम्बन्धी कार्य करके, समता अंशों का श्रेणीयन तथा विभिन्न उद्योगों का अनिवार्य अध्ययन करके इस आवश्यकता के प्रति सक्रिया रूप से कार्य किया है। ICRA ने भारत के साथ-साथ विदेशों में भी कम्पनियों तथा वित्तीय क्षेत्रों में अपनी सेवाओं को विस्तृत किया।

वर्तमान समय में ICRA अपनी सेवाएँ तीन प्रकार से प्रदान करता है—

(1) श्रेणीयन सेवाएँ (2) सूचना सेवाएँ (3) सलाहकार की सेवाएँ

ICRA विस्तृत रूप से निम्न तीन प्रकार की श्रेणीयन करती हैं—

(i) ऋणपत्रों एवं पूर्वाधिकार अंशों - AAA से BBB

(ii) स्थाई जमा - FAAA से FA

(iii) वाणिज्य पत्र तथा अल्पकालीन प्रमाण पत्र - P1 से P3

श्रेणीयन कम्पनी की साख क्षमता की ओर संकेत करता है तथा कम्पनी की समय पर मूलधन तथा ब्याज के भुगतान की सुनिश्चित करने की क्षमता को दर्शाता है।

### C. साख विश्लेषण तथा शोध लिमिटेड (Credit Analysis and Research Limited - CARE)

साख विश्लेषण तथा शोध लिमिटेड CARE की स्थापना अप्रैल, 1993 में साख श्रेणीयन, सूचना एवं सलाह सेवा कम्पनी के रूप में की गई, जिसे IDBI, UTI, केनरा बैंक तथा अग्रवर्ती बैंकों और वित्तीय कम्पनियों द्वार प्रोत्साहित किया गया। CARE के कुल 15 अंशधारी हैं।

वित्तीय संस्थाओं या बैंकों के विशेष आवेदन के बाद CARE सूचना एवं सलाह सेवा ग्रुप एक साख रिपोर्ट तैयार करता है, क्षेत्रीय अध्ययन करता है और वित्तीय पुन: संरचना मूल्यांकल एवं साख विश्लेषक प्रणाली के क्षेत्रों में सलाह सेवाएँ प्रदान करना है।

#### श्रेणीयन (CARE Rating)

CARE द्वारा भारतीय कम्पनियों तथा अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों की सहायक भारतीय कम्पनियों की सहायक भारतीय कम्पनियों के रुपये में ऋणों को श्रेणीयन किया जाता है। CARE सभी प्रकार के मध्यम एवं दीर्घकालीन प्रतिभूतियों जैसे ऋणपत्र, बाण्ड तथा सभी प्रकार के अल्पकालीन ऋण एवं दीर्घकालीन प्रतिभूतियों जैसे ऋणपत्र, बाण्ड सभी प्रकार के अल्पकालीन ऋण एवं दायित्वों जैसे वाणिज्य पत्र, जमा प्रमाण पत्र आदि के श्रेणीयन का उत्तरदायित्व लेता है। बल्कि अन्य अल्प ऋणदायित्वों का श्रेणीयन

भी करता है जैसे बीमा कम्पनियों की पालिसी धारकों के प्रति दायित्वों को पूरा करने की क्षमता। इसी प्रकार CARE पूर्वाधिकार अंश के श्रेणीयन में कम्पनी की लाभांश तथा शोधन वायदो को पूरा करने की क्षमता का निर्धारण किया जाता है।

CARE द्वारा की गई श्रेणीयन इस प्रकार है—

| | |
|---|---|
| CARE-1 | सर्वोत्तम ऋण प्रबंध क्षमता |
| CARE-2 | बहुत अच्छी प्रबंध क्षमता |
| CARE-3 | ऋण प्रबंध की अच्छी क्षमता |
| CARE-4 | ऋण प्रबंध की संतोषजनक क्षमता |
| CARE-5 | ऋण प्रबंध की अपर्याप्त क्षमता |

### D. फिच रेटिंग इण्डिया लिमिटेड (Fitch Rating India Limited)

फिच रेटिंग एक अन्तर्राष्ट्रीय श्रेणीयन एजेन्सी है। यह 75 देशों में स्थित है तथा विश्वव्यापी पूंजी बाजार के निवेशकों को अच्छा श्रेणीयन एवं शोध प्रदान करती है। यह ऐजन्सी वित्तीय संस्थाओं, बीमा निगमों एवं सार्वजनिक वित्त बाजार के लिए श्रेणीयन की सुविधा प्रदान करती है।

फिच इण्डिया किसी भी प्रतिभूति के श्रेणीयन हेतु उस प्रतिभूति को निर्गमित करने वाली संस्था की वित्तीय तथा क्रियात्मक सुदृढ़ता की जांच-पड़ताल करती है। इस कार्य के लिए फिच सिंगापुर तथा हांगकांग से वरिष्ठ प्रतिनिधियों एवं भारत से वरिष्ठ प्रबन्धकों की एक टीम का निर्माण करती है। श्रेणीयन प्रक्रिया आमतौर पर तीन सप्ताह का समय लेती है।

भारत में फिच द्वारा श्रेणीयन के लिए प्रयोग किए जाने वाले चिन्ह

| | | |
|---|---|---|
| दीर्घकालीन निवेश | - | AAA से D |
| आवधिक जमा | - | TAAA से TD |
| अल्पकालीन | - | FI से FS |

AAA का अभिप्राय उच्चतम साख गुण एवं D का अभिप्राय त्रुटिपूर्ण है। बाकी के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार का आंकलन किया जाता है।

### 3.2.8 श्रेणीयन प्रक्रिया में सुधार हेतु किए गए उपाय (Recent Measures to Reform Rating Process)

श्रेणीयन प्रक्रिया में आई कुछ कमियों में सुधार हेतु SEBI ने निम्नलिखित नए नियमों की घोषणा की—

(i) अस्वीकृत श्रेणीयन का निवेशकों के सामने प्रकटीकरण करना अनिवार्य कर दिया गया।

(ii) श्रेणीयन एजेन्सियाँ अब अपने प्रवर्तक संस्थओं के ऋण संसाधनों का श्रेणीयन नहीं कर सकती।

(iii) साख श्रेणीयन एजेन्सियों को अपने द्वारा किए गए प्रपत्रों के श्रेणीयन का पूर्ण अवधि में आवधिक पुनर्विचार होगा

(iv) यदि कियी कम्पनी का संचालन श्रेणीयन एजेन्सी की प्रर्वतक संस्था का भी संचालन है तो यह एजेन्सी अब उस कम्पनी के ऋण संसाधनों का श्रेणीयन भी नहीं कर सकती।

(v) 100 करोड़ या इससे अधिक के सभी सर्वजनिक ऋण संसाधनों का विभिन्न मान्यता प्राप्त श्रेणीयन एजेन्सियों द्वारा दोहरा श्रेणीयन करवाना अनिवार्य कर दिया गया है।

(vi) अब निर्गमनकर्त्ता कम्पनियों का उत्तरदायित्वों है कि वे पिछले तीन वषों में अपनी किसी भी सूचीबद्ध प्रतिभूतियों के करवाए गए सभी श्रेणियों का प्रकटीकरण करें।

## 4. सारांश (Summary)

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं, जोखिम पूँजी विकासशील देशों के विकास हेतु अति आवश्यक है। जहाँ उद्यमियों में काम करने का साहस, योग्यता तो होती है परन्तु वित्त की कमी की वजह से वे अपना स्वयं का व्यवसाय नहीं कर पाते। जोखिम पूँजी भारत में अनेक बैकों (निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के) एवं वित्तीय संस्थओं द्वारा से उद्यमियों को प्रदान करवा दी जाती है। इससे देश के औद्योगिक विकास को बढ़ावा मिलता है। लोगों को रोजगार मिलता है और प्रथम पीढ़ी के उद्यमियों को अपने विचारों को वास्तविकता में परिणित करने में सहायता मिलती है।

इसी प्रकार क्रेडिट रेटिंग के अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिभूतियों को जारी करने वाली संस्थाओं की रेटिंग विभिन्न एजेन्सियों द्वारा की जा रही है, जिससे इन प्रतिभूतियों में निवेश करने से पहले निवेशकर्त्ता (Investor) को ऐसी संस्थाओं की आर्थिक सुदृढ़ता की जानकरी मिल जाती है और उन्हें निवेश का सही निर्णय लेने में मदद मिलती है।

## 5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)

1. भारतीय वित्तीय प्रणाली - टी. आर. जैन एवं ओ. पी. खन्ना।
2. भारतीय वित्तीय प्रणाली - कुलदीप गुप्ता एवं डॉ. राजकुमार।

## 6. नमूने के प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. जोखिम पूँजी की परिभाषा दें? इसकी मुख्य विशेषताएँ तथा प्रकार बताइये।
   (Define Venture Capital. Give its main characteristics and forms.)

2. जोखिम पूँजी के कार्य तथा उद्देश्य क्या है ? जोखिम पूँजी के कार्यकरण की व्याख्या करें।
   (What are the functions and objectives of venture capital ? Explain the working of venture capital alongwith its schemes in operation.)

3. देश की अर्थव्यवस्था के विकास के लिए जोखिम पूँजी का क्या महत्व है ?
   (What is the importance of venture capital in the development of a Country's economy ?)

4. साख श्रेणीयन की धारणा का वर्णन करें। इसके कार्य तथा महत्व क्या हैं ?
   (Explain the concept of credit rating. What is its functions and significance ?)

5. साख श्रेणीयन से आपका क्या अभिप्राय है? साख श्रेणीयन प्रक्रिया में विश्लेषण के प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
   (What do you mean by credit rating ? Explain the types of analysis in credit rating process.)

6. क्रेडिट रेटिंग के प्रकारों का वर्णन करो। भारत की महत्वपूर्ण क्रेडिट रेटिंग एजेन्सियों का वर्णन करें। (Discuss the types of Credit Rating. Explain the important Credit Rating Agancies in India.)

**Paper : BC-206 (i) Indian Financial System** **Revised by : M.L. Singla**

**Lesson No. : 13**

# सौदागर बैंकिंग
# (Merchant Banking)

**विषय-सामग्री (Contents)**

1. परिचय (Introduction)
2. उद्देश्य (Objectives)
3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)
   - 3.1 सौदागर बैंकिंग का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Merchant Banking)
   - 3.2 सौदागर बैंकिंग की प्रकृति (Nature of Merchant Banking)
   - 3.3 सौदागर बैंकिंग के कार्य (Functions of Merchant Banking)
   - 3.4 सौदागर बैंकिंग की भूमिका (Role of Merchant Banking)
   - 3.5 अग्रप्रबन्धक/व्यापारिक बैंकर के उत्तरदायित्व (Responsibilities of Lead Manager/ Merchant Bankers)
   - 3.6 व्यवहार संहिता (Code of Conduct)
   - 3.7 एक सौदागर बैंक के लिए प्राधिकार (Authorisation for a Merchant Banker)
   - 3.8 सौदागर बैंकिंग समनुदेशन (Merchant Banking Assignment)
   - 3.9 भारत में सौदागार बैंकिंग (Merchant Banking in India)
   - 3.10 सौदागर बैंकों का भविष्य (Future of Merchant Banking)
4. सारांश (Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)
6. नमूने के प्रश्न (Self Assessment Questions)

## 1. परिचय (Introduction)

बैंकिंग व्यवसाय के आरम्भ के वर्षों में सौदागर बैंकिंग की शुरुआत तक हुई जब केवल सौदागरों को वित्त सुविधाओं की आवश्यकता होती थी। अमेरिका में सौदागर बैकों को निवेश बैंक के नाम से जाना जाता है जबकि इंग्लैंड में ग्रहणकर्त्ता तथा निर्गमनकर्ता गृह (Accepting the Issuing Houses) के नाम से जाना जाता है। हांलाकि अब कई देशों में सौदागर बैंक मुद्रा बाजार तथा पूँजी बाजार दोनों में ही व्यवहार करते है, वे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तौर पर ऋण देते हैं तथा व्यावसायिक संस्थाओं के लिए पोर्टफोलियों प्रबन्ध (Protfolio Managemen) करते है अर्थात् सौदागर बैंकों को पूँजी बाजार की क्रियाओं का केन्द्र बिन्दु समझा जाता है। सौदागर बैंक विद्यमान कम्पनियों के कोषों के प्रबन्ध के अलावा नई एवं पुरानी कम्पनियों को जारी की जाने वाली प्रतिभूतियों के अभिगोपन का उत्तरदरायित्व भी लेते हैं। अब 50 लाख रूपए से कम के अधिकार अंशों (Right Shares) के निर्गमन के अलावा शेष सभी सार्वजनिक निर्गमन (Public Issue) सौदागर बैंकों द्वारा मुख्य प्रबन्धकों के रूप में किए जाने अनिवार्य है।

सौदागर बैंकिंग की शुरूआत इंग्लैण्ड से हुई जहाँ यह बैंक विनिमय बिल स्वीकार करके विदेशी व्यापार के वित्त प्रबन्धक का कार्य करते थे। ये विदेशी व्यापार से सम्बन्धिक अन्य बैंकिंग कार्य जैसे स्वर्ण और विदेशी मुद्रा में व्यापार करना विदेशी ऋणकर्ताओं को लन्दन मुद्रा बाजार में मुद्रा उधार लेने में मदद करना आदि। परन्तु 20वीं सदी के प्रारम्भ से इन्होंने फर्मों के विलय, हस्तांतरण एवं अन्य वित्तीय मामलों पर सुझाव आदि देने का कार्य भी शुरु कर दिया था। आजकल से यूरो-मुद्रा बाजार से सक्रिय है और किस्त-खरीद एवं सोने-चाँदी में भी व्यापार करते है, प्रतिभूतियों के विपणन का कार्य भी करते है और प्रतिभूतियाँ जारी करने वाली कम्पनियों को प्रतिभूतियों की निश्चित कीमत की गारन्टी देते है। प्राय: सौदागर बैंकिंग की अन्तर्राष्ट्रीय चरित्र का माना जाता है।

भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने हाल ही में नवीन बैंकिंग शुरु की है। रिजर्व बैंक ने बहुत सी वित्तीय सेवाओं जैसे सौदागर बैंकिंग, पट्टा, जोखिम पूँजी, म्यूचुअल फंडल, आवास निर्माण आदि को प्रोत्साहित करने के लिए बैंकों को छूट दी है। भारत में मर्चेन्ट बैंकिंग की शुरूआत ग्रेडले, सिटी बैंक जैसे विदेशी बैकों ने की थी। आज वाणिज्यिक बैक अपनी, सहायक इकाईयों द्वारा ये सेवाएँ प्रदान कर रहे है। जैसे एस. वी. आई. केपिटल माकेट्स लिमिटेड, बैंक ऑफ बड़ौदा मर्चेन्ट बैंकिंग डिवीजन, यूनियन बैंक आफ इण्डिया मर्चेन्ट बैक डिवीजन, पी. एन. बी. सर्विसेज लिमिटेड आदि।

## 2. उद्देश्य (Objectives)

इस पाठ का उद्देश्य आपको सौदागर बैंकिग का अर्थ, कार्य एवं पूँजी बाजार में महत्त्व के साथ-साथ भारत में सौदागर बैंकिंग की शुरुआत एवं सौदागर बैंकिंग के भविष्य से अवगत करवाना है।

## 3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)

इस पाठ में सौदागर बैंकिंग के अर्थ, कार्यों, भूमिका एवं भारत में सौदागर बैंकिंग का कार्य करने वाली संस्थाओं की जानकारी के साथ-साथ सौदागर बैंकिंग के भविष्य पर प्रकाश डाला गया है।

### 3.1 सौदागर बैंकिंग का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Merchant Banking)

सौदागर बैंक शब्द का प्रयोग कई बार उन बैंकों के लिए किया जाता है जो सौदागर नहीं है और कई सौदागरों के लिए प्रयोग किया जाता है जो स्वयं बैंकर नहीं है कई ऐसे घरानों के लिए किया जाता है जो न तो सौदागर है और न ही बैंकर। सामान्यता सौदागर बैंक उस संस्था को समझा जा सकता है जो अपने प्रचालनों एवं अधिकांश क्रियाओं को नीचे लिखी बातों पर केन्द्रित रखता है।

(1) नए शेयर और ऋण जारी करने, पूँजी पुनर्निर्माण, विलयन एवं अर्जन आदि मामलों पर निगमों को वित्तीय परामर्श देना।

(2) मध्यकालीन उधार और ऋणों का व्यवसाय संघ बनाना।

(3) साख और निर्यात वित्त के सभी रूपों को स्वीकार करना।

(4) जमाओं और मुद्राओं को लेना, मुद्रा बाजार क्रियाओं सम्बन्धी परामर्श देना जिसमें विदेशी विनिमय लेने-देन भी सम्मिलित है।

(5) निवेशों का धारण करना और उनका व्यापार करना।

(6) ग्राहकों के नाम पर वित्त प्रबन्ध करना।

**मर्चेन्ट बैंकिंग**

नियमों को वित्तीय परामर्श देना

जमाओं और मुद्राओं को लाना

साख और निर्यात वित्त के सभी रूपों को स्वीकार करना

ग्राहकों के नाम पर वित्त प्रबन्ध करना

(a) शेयर और जारी करने में

(b) पूंजी पुनर्निर्माण (Reconstruction)

(c) विलयन (Merger)

(a) पैन्शन कोष

(b) यूनिट ट्रस्ट

(c) निवेश ट्रस्ट

**परिभाषाएँ**—L.M. Bole के अनुसार सौदागर बैंक प्रतिभूतियों के लेन देन कर्ताओं, व्यापारियों तथा दलालों से भिन्न है ये बैंक मुख्यत: नए निर्गमनों में व्यवहार करते हैं, जबकि अन्य विद्यमान प्रतिभूतियों में लेन-देन करते हैं। व्यापारिक बैंक बैंकिंग व्यवसाय की तुलना में दलाली व्यवसाय से अधिक संलग्न है। वे प्रबन्धकर्ता दलाल या मध्यस्थ के रूप में एक शुल्क लेकर ग्राहकों के लिए कोषों का प्रबन्ध करते हैं या वित्तीय लेन देनों के समझौते करते हैं।

The merchant banks are different from securities dealers traders and brokers. They deal mainly in new issues while latter deal mainly in existing securities. The merchant Banks are engaged more in broking than in banking business. They arrange funds or negotiate financial deals for their client for a fee as arrangers; brokers or inter mediaries.

M. Y. Khan के अनुसार सौदागर बैंकर्स की मुख्स सेवाओं, कार्यों द्वारा उनके पूँजी निर्गमन प्रवर्तकों के रूप में महत्त्व का पता लगता है— जैसे पूँजी ढाँचे का निर्धारण एवं संयोजन, प्रविवरण तथा आवेदन पत्रों का प्राप तैयार करना, कार्य प्रणाली की औपचारिकताओं को पूरा करना, अंश प्रमाण पत्र तथा हस्तांतरण के लिए रजिस्ट्रार की नियुक्ति करना, प्रतिभूतियों की सूची बद्धता, अभिगोपण तथा उप अधिगोपण के प्रबन्ध करना, निर्गमन करना, दलालों, निर्गमन के लिए बैकर्स, प्रकाशक एवं विज्ञापन एजेन्टों प्रिन्टर्स आदि का चयन करना।

The importance of merchant bankers as sensors of capital issues is reflected in their major services functions, such as determining the composition of capital, structure, drafting of prospectus and application forms: compliance with procedural formalities, appointment of registrars to deal with the share application and transfer, listing of securities, arrangement of underwriting and sub under-writing, placing of issues, selection of brokers, bankers to issue publicity and advertising agents, printers and so on.

वित्त मन्त्रालय की सूचना में सौदागर बैंकर्स को इस प्रकार परिभाषित किया गया कि कोई भी व्यक्ति जो निर्गमन प्रबन्ध में संलग्न है या तो प्रबन्धक एवं सलाहकार के रूप में प्रतिभूतियों के क्रय–विक्रय या अंशदान द्वारा या ऐसे निर्गमन प्रबन्ध के सम्बन्ध में नैगमिक, सलाहकारी सेवाएँ प्रदान करता हो।

Any person who is engaged in the business of issue management either by making arrangements regarding selling, buying or subscribing to securities as manager, consultants, advisors or lendering corporate advisory services in relation to such issue management.

सौदागर बैंक मुख्यत: एक फीस (Fee) के बदले वित्त संबंधी सेवाएँ प्रदान करते हैं, जबकि वाणिज्यिक बैंक (Commercial Banks) मुख्यत: पैसे को जमा करने एवं उधार देने का कार्य करते है। सौदागर बैंकों को प्रतिभूति डीलर, व्यापारी एवं दलाल (Broker) से भी अलग समझा जा सकता है।

### 3.2 सौदागर बैंकिंग की प्रकृति (Nature of Merchant Banking)

(1) यह निपुणता पर आधारित गतिविधि है।

(2) यह ग्राहक की किसी भी वित्तीय आवश्यकता में संलग्न है।

(3) ग्राहकों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इसमें केन्द्रित निपुणता की आवश्यकता है।

(4) सौदागर बैंकिंग की गतिविधियों में कृत्रिमता की अपेक्षा की जाती है।

सौदागर बैंकिंग सभी प्रकार की सेवाएँ प्रदान कर सकते हैं अर्थात् व्यवसाय को विकसित करने की भूमिका निभा सकते है। सौदागर बैंकर्स बैंकिंग के बताए गए सभी कार्य कर सकते हैं परन्तु यह सब उनके संसाधनों पर निर्भर करता है।

### 3.3 सौदागर बैंकिंग के कार्य (Functions of Merchant Banking)

सौदागर बैंकों के आधारभूत कार्यों में कार्पोरेट (Corporate) और दूसरी प्रतिभूतियों का विपणन जिसमें प्रतिभूतियों की बिक्री एवं वितरण का गारन्टी भी शामिल है, आते हैं। औद्योगिक प्रतिभूतियों के निर्गमन से लेकर उनके अभिगोपन और वितरण से संबंधित सभी पहलुओं को सौदागर बैंकों के कार्यो के अन्तगर्त शामिल किया जाता है। सौदागर बैंक निर्गमनों का अभिगोपन करके उनकी सफलता की गारन्टी देते है इसी क्रम में वे प्रार्थना पत्र प्राप्त करने, आबंटन पैसा इकट्ठा करने और अंशों और ऋणपत्रों को भेजने से सम्बन्धित सेवाएं प्रदान करते हैं।

सौदागर बैंक केवल संस्थाओं को केवल पैसा इकट्ठा करने में ही मदद नहीं करते बल्कि निवेशकों को भी अपनी सेवाएँ प्रदान करते हैं। सौदागर बैंकों द्वारा की गई क्रियाओं का क्षेत्र औद्योगिक प्रतिभूतियों के निर्गमन (Issue) को Sponcor करने से कहीं ज्यादा है। हाल ही में एक मर्चेन्ट बैंक द्वारा दिये गये इसके विज्ञापन में इसने अग्रलिखित क्रियाओं अथवा सेवाओं को निर्दिष्ट किया है जिन्हें नीचे एक चार्ट द्वारा भी स्पष्ट किया जा रहा है।

**FUNCTIONS OF MERCHANT BANKING**

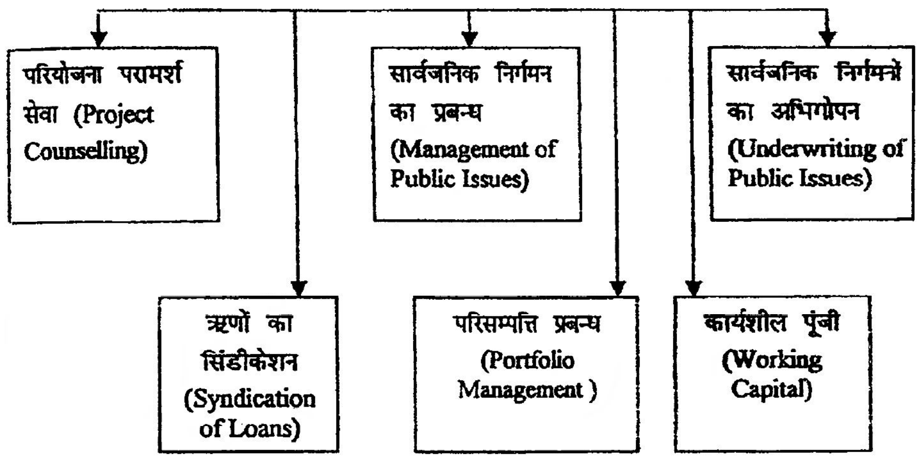


### (1) परियोजना परामर्श सेवा (Project Counselling)

सौदागर बैंक ग्राहकों के हितों के लिए कुछ चयन किए गए क्षेत्रों की परियोजनाओं की पहचान करके उनका आर्थिक एवं वित्तीय अध्ययन करते हैं और गहन परियोजना रिपोर्ट तैयार करते है और परियोजना की तकनीकी साध्यता (Feasibility) एवं व्यापारिक जीवनक्षमता (Viability) के बारे में भरोसा होने पर सौदागर बैंक का दूसरा कार्य वित्त की संरचना (Structure of Finance) तैयार करना है, इसके अलावा सौदागर बैंक की निम्नलिखित क्रियायें और करनी पड़ती है—

(i) लाइसैंस प्राप्त करने में निवेशकर्ता की सहायता करना।

(ii) प्रोजेक्ट की लागत का अनुमान लगाना।

(iii) विदेशी सहयोग का प्रबन्ध करना एवं समझौता करवाना।

(iv) समामेलन, विलयन और कार्य भार संभालने में मार्गदर्शन करना।

### (2) ऋणों का सिंडिकेशन और परियोजना वित्त (Syndication of Loans and Project Finance)

परियोजना की पहचान करने और सरकारी विभाग इस परियोजना पर काम करने की अनुमति (Clearance) प्राप्त हो जाने पर सौदागर बैंक निम्नलिखित कार्य करता है—

(i) बैंकिंग एवं गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं को आवेदन करने में सहयता करना।

(ii) सरकारी नीतियों, कच्चा माल उपलब्धता, वस्तु मिश्रिण, योजना क्षमता प्रयोग, स्थाई सम्पत्तियों की आवश्यकताओं (मुख्यत: प्लाण्ट और मशीनरी) के लिए परामर्श देना।

(iii) वित्त के वैकल्पिक स्त्रोतों, ऋण-समता अनुपात (Debt-Equity Ratio) आदि के लिए सलाह देना।

(iv) सरकारी विभागों, बैकों एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं से संपर्क स्थापित करना।

(v) आधुनिकीकरण, विस्तार और विकेन्द्रीकरण के लिए परामर्श और सहायता देना।

(vi) बैंकों तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा निर्धारित वैधानिक औपचारिकताओं को शीघ्र पूरा करने में सहायता करना।

(vii) उपक्रम के स्वयं के अंशों के लिए अनिवार्य कोषों का प्रबन्ध करना।

### 3. सार्वजनिक निर्गमन का प्रबन्ध (Management of Public Issues)

सौदागर बैंकों का मुख्य कार्य निर्गमनों का प्रबन्ध करना है। सार्वजनिक निर्गमनों के सम्बन्ध में सौदागर बैंकों को निम्नलिखित कार्यो में सहायता प्रदान करती पड़ती है—

(i) SEBI से निर्गमन के लिए सहमति प्राप्त करना।

(ii) प्रस्तावित निर्गमनों के लिए अभिगोपण का प्रबन्ध करना।

(iii) प्रविवरण (Prospectus) तैयार करना एवं अभिगोपकों, शेयर दलालों, अंकक्षकों, कम्पनी के रजिस्ट्रारों आदि की स्वीकृति लेना एवं प्रविवरण जमा करवाने सम्बन्धी अन्य आवश्यक कार्य करना।

(iv) निर्गमन के लिए रजिस्ट्रार प्रिटिंग प्रैस, विज्ञापन एजेन्सियों, अभिभावकों दलालों तथा बैकर्ज आदि का चयन करना और उन्हें दिया जाने वाला शुल्क निर्धारित करना।

(v) स्टाक एक्सचेंज में निर्गमित की जाने वाले प्रतिभूतियों को सूचीबद्ध करवाने हेतु स्टाक एक्सचेंज में आवेदन करना।

(vi) अन्य प्रपत्र जैसे आवेदन पत्र आदि को तैयार करना एवं प्रविवरण की विषय सामग्री की समाचार पत्रों में घोषणा करना।

(vii) निर्गमनों को अधिक आकर्षित बनाने के लिए निर्गमन की शर्तो का निर्धारण करना।

### 4. सार्वजनिक निर्गमनों का अभिगोपन (Underwriting of Public Issues)

सौदागर बैंकों का एक और कार्य निर्गमनों का अभिगोपण तथा कम्पनियों के लिए पूँजी उपलब्ध करवाना है। SEBI ने प्रारम्भ में सभी प्रस्तावित सार्वजनिक निर्गमनों के लिए अभिगोपण अनिवार्य कर दिया था, परन्तु बाद में इसे ऐच्छिक कर दिया गया।

### 5. कार्यशील पूँजी (Working Capital)

सौदागर बैंक कार्यशील पूँजी के लिए विशेषकर नए उद्यमों (कम्पनियों) के लिए वित्त उपलब्ध करवाने में सहायता करते हैं। वित्त को आवश्यकता अधिक होने के स्थिति में सौदागर बैंक गैर-परम्परागत स्त्रोतों जैसे ऋणपत्रों के निर्गमन द्वारा वित्त प्रदान करवाते हैं। इसी प्रकार सौदागर बैंक वित्तीय संस्थाओं जैसे LIC, GIC, UTI आदि जो इन निर्गमनों के प्रमुख समर्थक है) के लिए आवश्यक फार्मो को तैयार करने में ग्राहकों (कम्पनियाँ जो ऋणपत्र निर्गमित कर रही है) की सहायता करने में अच्छी भूमिका निभा रहे हैं। ऋणपत्रों के लिए ट्रस्टियों का बन्दोबस्त भी करते हैं।

### 6. परिसम्पत्ति प्रबन्ध (Portfolio Management)

सौदागर बैंक संस्थागत निदेशकों के विभिन्न तथ्यों को ध्यान में रखकर उचित निवेश मिश्रण बनाने की सलाह भी देते हैं। ग्राहकों की और से प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय करते हैं। सौदागर बैंक परिसम्पत्ति प्रबन्ध के सम्बन्ध में देशी एवं विदेशी दोनों प्रकार के ग्राहकों को सेवाएँ प्रदान करते हैं। जो इस प्रकार हैं—

(i) देशी (घरेलू) निवेशकों को सेवाएँ (Services to Domestic Investors)

(a) प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय करने का मार्गदर्शन।

(b) स्थाई जमा का प्रबन्ध।

(c) निवेश से प्राप्त आय को अन्य लाभदायक सौदों में पुनर्निवेश करना।

(d) ट्रस्ट कोषों, पेंशन एवं प्राविडेनट फण्ड निवेशों का प्रबन्ध एवं अवलोकन।

(e) प्रतिभूतियों को सुरक्षित रखना।

**(ii) विदेशी/प्रवासी निवेशकों को सेवाएँ (Services to Foreigner/Non-Resident Investors)**

(a) प्रतिभूतियों का लेन-देन करने के लिए RBI से स्वीकृति प्राप्त करना।

(b) प्रतिभूतियों के क्रय-विक्रय के सम्बन्ध में सलाह देना।

(c) निवेश परिसम्पत्तियों का मूल्यांकन करना एवं निवेश रिकार्ड कायम करना।

(d) निवेश पर ब्याज तथा लाभांश एकत्रित करना एवं प्रेषित करना।

(e) कर से संबंधित परामर्श देना रिटर्न भरना एवं दस्तावेज सुरक्षित रखना।

### 7. विदेशी मुद्रा ऋण (Foreign Currency Loans)

आज के युग में आर्थिक गतिविधियाँ वैश्वीकरण के कारण देश की सीमाओं तक सीमित न रहकर संसार भर में विस्तृत हो चुकी है। कम्पनियाँ को पूँजीगत वस्तुओं एवं सेवाओं के आयात के लिए विदेशी पूँजी की आवश्यकताओं होती है, इसी प्रकार देश से बाहर संयुक्त कम्पनियाँ आरम्भ करने के लिए व्यवसायी को विदेशी मुद्रा चाहिए। इन सबके लिए सौदागर विदेशी मुद्रा उपलब्ध करवाकर और प्रोजेक्ट्र के वित्तीय ढांचे में सहयोग देकर व्यापारियों/व्यावसायियों का बचाव करते हैं।

### 8. जोखिम पूँजी (Venture Capital)

सौदागर बैंक उन उद्यमियों को कोष उपलब्ध करवाते हैं, जिनके पास जोखिम में डालने के लिए पूँजी कम है, परन्तु उन उद्यमियों के पास उत्साह, जोश व गत्यात्मकता हैं। ऐसी स्थिति में सौदागर बैंक असफल विचारों, उत्पादों, तकनीकों अर्थात् नए प्रकार के उद्योग-धन्धों के लिए पूँजी कोष प्रदान करते हैं।

### 9. पट्टा वित्त (Lease Venture)

इस क्षेत्र में सौदागर बैंक कार्य करने का प्रयास कर रहे हैं, कुछ बैंक ने साहस करके इस क्षेत्र में प्रवेश भी कर लिया है अर्थात् कुछ सौदागर बैंक अपने ग्राहकों को पट्टे पर ली गई सम्पत्ति को खरीदने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने लगे हैं।

### 10. प्रबन्धकीय एवं तकनीकी सेवाएँ (Managerial and Technical Services)

अब सौदागर बैंक अपने ग्राहकों को तकनीकी, वित्तीय, प्रबन्धकीय तथा संगठनात्मक क्षेत्रों में आने वाले कठिनाईयों का सामना करने के लिए भी सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं एवं कमियों को दूर कर रहे हैं।

### 11. अर्जन, विलयन, कार्यभार संभालना (Acquisition, Merger, Takeovers)

सौदागर बैंक ऐसे निवेशकों को विशेषज्ञ परामर्श देते हैं, जो उनके पास अर्जन, विलयन एवं कार्यभार लेने या न लेने के लिए सहायता के लिए जाता है।

### 12. पूँजी ढाँचे पर विचार विनिमय (Counselling of Capital Structure)

सौदागर बैंक कम्पनियों के पूँजी ढाँचे एवं किस प्रकार की पूँजी उत्पन्न हो, इस बात पर भी विचार विनिमय करते हैं। वे वित्तीय गैर–वित्तीय सेवाएँ भी प्रदान करते हैं। पूँजी ढाँचे के सम्बन्ध में निम्न प्रकार की सेवाएं सम्मिलित हैं—

(i) कुल पूँजीकरण के निर्धारण हेतु निगम के पूँजी ढाँचे की जाँच करना।

(ii) FEMA के अन्तगर्त आने वाली कम्पनियों के लिए ऐसे वैकल्पिक पूँजी ढ़ाँचे का सुझाव देते हैं, जो वैधानिक अपेक्षाओं के अनुरूप हों।

(iii) वर्तमान उत्पादन प्रणाली के लिए विविधीकरण क्षेत्रों की पहचान करते है तथा विविधीकरण को ध्यान में रखते हुए वर्तमान पूँजी ढाँचे की पुनःसंरचना का सुझाव देना।

(iv) बीमार इकाईयों को बचाने/सक्षम इकाई बनाने हेतु उचित पूँजी संरचना का सुझाव देते हैं, इसी प्रकार व्यवसाय में पूँजी सीमा एवं नई पूँजी लाने के स्त्रोतों के बारे में भी सुझाव देते हैं।

## 3.4 सौदागर बैंकिंग की भूमिका (Role of Merchant Banking)

सौदागर बैकों द्वारा निम्नलिखित भूमिकाएँ निभाई जाती हैं—

(1) प्रोजैक्ट के लिए केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकार से स्वीकृति प्राप्त करने के लिए सलाह देना तथा सम्पर्क स्थापित करना।

(2) प्रोजैक्ट की तकनीकी तथा वित्तीय सम्भावित रिपोर्ट तैयार करना।

(3) प्रारम्भिक प्रोजैक्ट तैयार करना, उसका पूर्ण निवेश निरीक्षण एवं बाजार अध्ययन।

(4) वित्तीय प्रबन्ध एवं उचित पूँजी ढाँचा बनाने में सहायता करना।

(5) विदेशी विनिमय संसाधनों को उपलब्ध करवाने में सहयोग करना।

(6) प्रतिभूतियों के निर्गमन के लिए अभिगोपन।

(7) पुनर्निर्माण की सलाह जैसे समामेलन, संविलयन, एकीकरण अथवा अधिग्रहण आदि।

(8) प्रबन्धकीय एवं तकनीकी कर्मचारियों को भर्ती में सहयोग देना।

(9) विदेशी में प्रोजैक्ट बनाने और विदेशी बाजार स्थापित करने में सलाह एवं सहायता करना।

(10) प्रबन्धकीय सहायता करना।

## 3.5 अग्रप्रबन्धक सौदागर बैंकर के उत्तरदायित्व (Responsibilities of Lead Managers/Merchant Bankers)

एक अग्रणी प्रबन्धक सौदागर बैंकर के SEBI तथा निर्गमनकर्त्ता कम्पनी के प्रति निम्नलिखित उत्तरदायित्व हैं—

1. **अनुबन्ध (Contract) :** एक सौदागर (व्यापारिक) बैंकर को निर्गमनकर्ता कम्पनी के साथ एक अनुबंध करना चाहिए जिसमें उन्हें साधारण तथा ऐसी निर्गमनों तथा विशेष रूप से घोषणाओं, आबंटनों से सम्बन्धित अपने आपसी अधिकारों व उत्तरदायित्वों का वर्णन करना चाहिए।

2. **अनुबन्ध की प्रति जमा करना (Submission of Copy of Contract) :** उन्हें निर्गमनों का अंशदान आरम्भ होने से 1 महीने पहले इस अनुबंध की एक प्रति जमा करवानी चाहिए।

3. **अभिगोपन उत्तरदायित्व (Underwriting Obligation) :** एक अग्र व्यापारिक बैंकर को कुल अभिगोपन राशि के 5% या 25 लाख रुपय दोनों में से जो कम हों, उसका उत्तरदायित्व लेना चाहिए। यदि स्वयं अभिगोपन उत्तरदायित्व पूरा करने में असमर्थ हो, तो वह SEBI को सूचित करके उस निर्गमन के सहचारी व्यापारिक बैंकर से उतनी ही राशि का अभिगोपण करने का प्रबन्ध करें।

4. **उचित कर्मिष्ठता का प्रमाण-पत्र करना (Submission of One Diligence Certificate) :** एक अग्र व्यापारिक बैंकर को निर्गमनों का अंशदान शुरू होने से कम से कम 2 सप्ताह पहले प्रविवरण या प्रस्ताव पत्रों के तथ्यों की जाँच या विचारों की प्रमाणिकता के सम्बन्ध में SEBI में एक उचित कर्मिष्ठता का प्रमाण-पत्र जमा करना चाहिए।

5. **निर्गमनों से सम्बन्ध (Association with the Issue) :** उसे निर्गमनों से तक पूर्ण रूप से सम्बन्ध बनाए रखना चाहिए जब तक अंशदानकर्ता अंश/ऋण पत्र या प्रमाण पत्र या अतिरिक्त आवेदन राशि प्राप्त न कर लें।

6. **अप्रकाशित प्रतिभूतियां न रखना (Not to Acquire Unpublished Securities) :** व्यापारिक बैंकरों को ऐसी अप्रकाशित संवेदनशील मूल्य सूचनाओं के आधार पर किसी भी कम्पनी की प्रतिभूतियों को प्राप्त नहीं करना चाहिए उन्हें अपने पेशेवर कार्य के सम्पादन के दौरान प्राप्त हुई हैं।

7. **अग्र प्रबंधक के रूप में कार्य करने के लिए इन्कार करना (Refusal to Work as Lead Manager) :** यदि निर्गमनकर्ता उसकी सहयोगी कम्पनी है तो उसे अग्र प्रबन्धक के रूप में कार्य करने से इन्कार कर देना चाहिए। उन्हें ऐसे व्यापारिक बैंकर से भी संबंध नहीं रखना चाहिए, जिन्होंने SEBI द्वारा जारी पंजीकरण प्रमाण प्राप्त न किया हो।

### 3.6 व्यवहार संहिता (Code of Conduct)

एक सौदागर बैंकर को निम्नलिखित व्यवहार संहिता का पालन करना चाहिए।

1. **उच्चकोटि की एकाग्रता एवं स्पष्टता (High Standard of Integrity and Fairness)**—एक व्यापारिक बैंकर को अपने ग्राहकों तथा अन्य व्यापारिक बैंकरों से अपने दैनिक व्यापार व्यवहार में उच्च काटि की एकाग्रता तथा स्पष्टता बरतनी चाहिए।

2. **उचित कर्मिष्ठता का पालन (Exercising due Diligence)**—उसे अपने व्यवसाय में उच्च कोटि की सेवाएँ प्रदान करनी चाहिए, पूर्ण कर्मिष्ठता से कार्य करना चाहिए, पूर्ण सुरक्षा सुनिश्चित करनी चाहिए तथा स्वतन्त्र व्यावसायिक जाँच करनी चाहिए।

3. **हितों एंव कर्त्तव्यों में मतभेद प्रकट करना (Desclosure of Conflict of Interest and Duties)**—इसे कोई भी आबंटन करने तथा सेवाएँ प्रदान करने से पहले ग्राहकों के कर्त्तव्यों एवं हितों में होने वाले सम्भावित मतभेदों को प्रकट करना चाहिए।

4. **कोई हानिकारक विवरण नहीं (No Harmful Statement)**—वह कोई ऐसा वितरण नहीं दे सकता या कार्य नहीं कर सकता या अनुचित प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता, जिससे अन्य व्यापारिक बैंकरों के हितों को हानि पहुँचाते हो।

5. **गुप्त सूचनाएँ प्रकट न करना (Should not Disclose Confidential information)**—यदि व्यवसाय के दौरान उसे अपने ग्राहक की किसी वस्तु की सूचना की जानकारी प्राप्त हो तो उसे ये सूचना अन्य ग्राहकों, प्रैस या अन्य किसी पक्षकार को नहीं देना चाहिए।

6. **किसी अनैतिक या अनुचित प्रक्रिया में भागीदार नहीं होना चाहिए (Should not be part of Unethical or Unfair Action) जैसे**—

   (क) कीमतों में अस्थाई वृद्धि या धोखेबाजी नहीं करनी चाहिए।

   (ख) उसे कम्पनियों से सम्बन्धित गुप्त सूचनाएँ दलालों, शेयर बाजार के सदस्यों तथा पूँजी बाजार के अन्य पक्षकारों को नहीं देनी चाहिए।

   (ग) कृत्रिम बाजार बनाने में शामिल नहीं होना चाहिए।

7. **कोई अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण नहीं (No Exaggerated Statement) :** उसे निश्चित सेवा प्रदान करने हेतु अपनी योग्यता या क्षमता अथवा ग्राहकों को दी गई सेवाओं के सम्बन्ध में कोई अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण नहीं देना चाहिए।

8. **SEBI के प्रावधानों को स्वीकार करना (Abide by Provisions of SEBI) :** एक व्यापारिक बैंकर को अधिनियम के नियमों, नियमनों तथा प्रावधानों को स्वीकार करना चाहिए।

### 3.7 एक सौदागर बैंक के लिए प्राधिकार (Authorisation for a Merchant Banker)

जो कोई व्यक्ति या निकाय Body सौदागर बैंक के व्यवसाय में रूचि रखता है और नया व्यवसाय शुरू करना चाहता है या वर्तमान व्यवसाय को बढ़ाना चाहता है तो उसे इसके लिए The Securities & Exchange Bank of India (SEBI) से प्राधिकार लेना होगा। इसके लिए एक निर्धारित फार्मेट (Formal) भरना पड़ेगा। अत: SEBI का प्राधिकार (Authority) देने का मापदण्ड निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

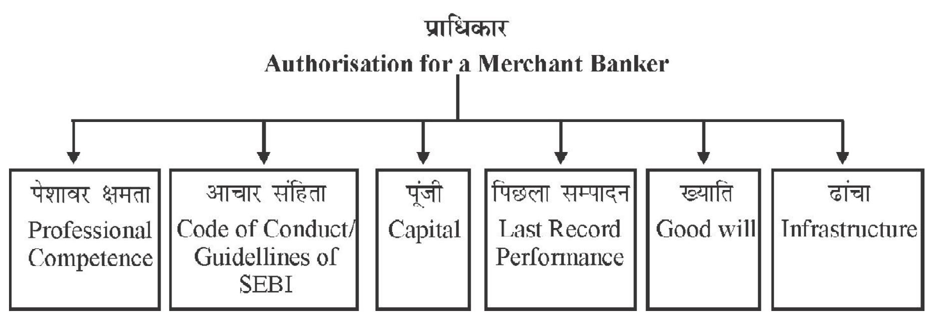


**सौदागर बैंकिंग सेवाएँ (Merchant Banking Services)**—निम्नलिखित बैंकिंग सेवा में निम्नलिखित क्रियाएँ शामिल है।

1. **ग्राहकों को परामर्श देना**—सौदागर बैंकिंग अपने ग्राहकों को पूँजी एकत्रित करने के सम्बन्ध में/पूँजी निर्गमन के सम्बन्ध में, निर्गमन अभिगोपन (Underwriting) प्रविवरण को तैयार करने के सम्बन्ध में (Prospectus) परामर्श देता है।

2. **वित्तीय संस्थाओं से ऋण इकट्ठा करना (Collection of Loan from Financial Institution)**—मचेंन्ट बैंकिंग, वित्तीय संस्थाओं में विदेशी मुद्रा अथवा रुपया मुद्रा के रूप में दीर्घकालीन ऋण इकट्ठा करना।

3. वाणिज्यिक बैंक से कार्यशील पूँजी एकत्रित करना।

4. विलयन और एकता के सुझाव देना (Give suggestion regarding Merger and Amalgamation)।

### 3.8 सौदागर बैंकिंग समनुदेशन (Merchant Banking Assignment)

समनुदेशन (Assignment) का अर्थ होता है कि सुपुर्द किया गया या सौंपा गया काम। सौदागर बैंकों के समनुदेशन या सौंपे गए काम निम्नलिखित हैं—

1. **Merchant Banking Assignment कौन प्राप्त कर सकता है (Who can Secure MB Assignment) :** कई बैंकों में इनके कार्यालय में एक पूर्ण सौदागर बैंकिंग विभाग है, जिसका मुखिया सहायक महाप्रबन्धक है इसके अतिरिक्त, एक सौदागर बैंकिंग प्रकोष्ठ cell है जिसकी देखाभल दिल्ली, कलकत्ता, चेन्नई और अहमदाबाद में महानगर शाखा के एक अधिकारी द्वारा की जाती है। इस cell द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि उन्हें MB Assignment प्रारम्भिक अवस्था में प्राप्त हो जाए। MB Assignment प्राप्त करने की जिम्मेदारी न केवल सौदागर विभागों की है बल्कि बैंक के प्रत्येक अधिकारी की।

2. **MB समनुदेशनों को टैप कैसे किया जाए (How to tap MB Assignments) :** नये उद्यम और वर्तमान उद्यम, विकेन्द्रीकरण अथवा आधुनिकीकरण कार्यक्रम के सम्बन्ध में सूचना प्राप्त करने के अनेक स्त्रोत है। ग्राहकों को साक्षात्कार, नई मदें, प्रस्तावों की समीक्षा आदि ऐसे कई रास्ते है जिनसे सम्भव MB Assignment के बारे में सूचना प्राप्त की जा सकती है। इस प्रारम्भिक अवस्था में ग्राहकों के साथ सम्पर्क MB Assignment प्राप्त करने में सहायक बना सकता है।

3. **समनुदेशनों के लिए शुल्कों का पैमाना (Scale of Fees for Assignment) :** शुल्कों का पैमाना सम्भावित सेवाओं की प्रकृति और उस पर लगने वाले समय पर निर्भर करता है। इन समनुदेशनों पर व्यय होने वाले सम्भावित मानव घंटों का एक भाग इनको पूरा करने में विभाग द्वारा ली जाने वाली जिम्मेवारी आदि इसके मुख्य निर्धारक है।

4. **MB समनुदेशनों को प्राप्त करने के लाभ (Advantages of Securing MB Assignments):** (क) नये ग्राहकों के साथ सम्पर्क बनाने में अग्रिम परिसम्पत्ति (Advance Portfolio) की सम्भावना के साथ सहायक व्यापार भी बढ़ता है। (ख) तकनीकी मूल्यांकनों, ऋण सिंडीकेशन व सार्वजनिक निर्गमन प्रबन्ध एवं निर्गमन के लिए बैंकरों का कमीशन तथा अभिगोपद समनुदेशनों आदि से फीस या शुल्क के रूप में आय प्राप्त होती है।

5. **MB समनुदेशनों को कौन सम्भालेगा (Who will Handle MB Assignment) :** आमतौर पर MB समनुदेशन मुख्य कार्यालय में स्थापित विभाग द्वारा सँभाले जाते है।

6. **आवश्यकता स्वीकृतियाँ (Sanctions Required) :** सम्भावित MB Assignment के लिए बेशक प्रारम्भिक विचार विमर्श बिना किसी स्वीकृति के शुरू किया जा सकता है। परन्तु इससे पहले कि आवेदन पत्र विभिन्न एजेन्सियों को भेजे जाएँ। परियोजना परामर्श सेवा, ऋण सिंडीकेशन

और सार्वजनिक निगम के प्रबन्ध के समनुदेशनों के लिए मुख्य कार्यालय समिति की स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक है।

10 लाख रुपये के सभी अभिगोपन प्रस्ताव स्वीकृति के लिए मुख्य कार्यालय समिति को दिये जाते हैं। और ऊँची राशि के लिए बोर्ड की स्वीकृति के लिए भेजे जा सकते हैं। निर्गमन के लिए बैंकर के कार्य करने की सहमति के लिए निर्णय निम्न दो तत्त्वों के आधार पर लिया जाता है।

(क) बैंक की शाखा आवेदन पत्र मुद्रा एकत्रित करने के लिए अधिकृत होनी चाहिए।

(ख) काम करने के लिए इसके पास पर्याप्त बुनियादी ढांचा (Infra-Structure) होना चाहिए।

### 3.9 भारत में सौदागर बैंकिंग (Merchant Banking in India)

साठ के दशक के आरम्भ में भारतीय बैंकिंग प्रणाली में कोई सौदागर बैंक नहीं था। सन् 1967 में पहली बार ग्रिंडलेज बैंक ने भारत में सौदागर बैंकिंग सेवाएँ शुरू की। इसके बाद सिटी बैंक व चार्टई बैंक जैसे विदेशी बैंकों ने भारत में सौदागर बैंकिंग सेवाएँ आरम्भ की। 1970 तक इन बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली मुख्य सेवाएँ शेयर जारी के प्रबन्ध तक ही सीमित थीं। विदेशी विनिमय (निगमन) अधिनियम 1973 के समावेश से पूँजी बाजार में तेजी आई। निवेश करने वाली जनता में पूँजी बाजार के प्रति जागरूकता पैदा हुई। इससे व्यापारिक बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं में सौदागर बैंकिंग विभाग खोलने को बल मिला। इसके साथ-साथ निजी वित्तीय दलालों ने भी निजी सौदागर बैंकिंग का संगठन शुरू कर दिये। आज देश में स्थापित सौदागर बैंकिंग को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है।

## सौदागर बैंकों का वर्गीकरण

| विदेशी बैंक | भारतीय बैंक | वित्तीय संस्थाएं | निजी सौदागर बैंक |
|---|---|---|---|
| (i) ग्रिंडले बैंक | (i) भारतीय स्टेट बैंक | (i) भारतीय औद्योगिक साख और निवेश निगम (ICICI) | (i) J.M. Financial Consultants |
| (ii) सिटी बैंक | (ii) बैंक ऑफ इण्डिया | (ii) भारतीय, औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम | (ii) Champak Lal Investments and Financial Consultancy |
| (iii) चार्टर्ड बैंक | (iii) भारतीय सेन्ट्रल बैंक | | (iii) V.B. Consultants |
| (iv) हांगकांग बैंक | (iv) बैंक ऑफ बड़ौदा | | |
| | (v) पंजाब नेशनल बैंक | | |
| | (vi) युको बैंक | | |
| | (vii) केनरा बैंक | | |

ISBI की वार्षिक रिपोर्ट 2002-03 के अनुसार व्यापारिक बैंकों द्वारा प्राप्त किया गया शुल्क 212.70 लाख रुपये था। जबकि 2003-04 में यह केवल 105.20 लाख रुपये था। मार्च 2004 में (SEBI) में 123 सौदागर बैंकों का पंजीकरण किया गया।

### 3.10 सौदागर बैंकिंग का भविष्य (Future of Merchant Banks)

सौदागर बैंकिंग विभाग के लिए बदलती हुई बाजार परिस्थितियों के अनुसार सौदागर बैंकिंग सेवाओं का विकास करना एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। आज समस्त सौदागर बैंकिंग उद्योग को भारत में प्रवासी भारतीयों के निवेश को आकर्षित करने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। विशेषकर शेयर बाजारों के माध्यम से परिसम्पत्ति निवेश की स्कीम के तहत इस निवेश को आकर्षित करना। कई उदारीकरण की नीतियों के होते हुए भी प्रवासी भारतीयों में प्रतिक्रिया (Respones) आशा से कम है। इसका मुख्य कारण प्रवासी निवेशकों के पास भारतीय शेयर बाजार में बदली परिस्थितियों के बारे में आवश्यक सूचना उपलब्ध नहीं है। सौदागर बैंकिंग विभाग अब एक व्यापक परिसम्पत्ति परामर्श सेवा (Portfolio Advisory Service) शुरू करने की प्रक्रिया में लगा हुआ है। इस सेवा का मुख्य उद्देश्य सूचना खाई (Information Gap) को भरना है, निवेश अवसरों पर विशेषज्ञ परामर्श सेवा प्रदान करना, परिसम्पत्ति का समय के साथ-साथ मूल्यांकन करना और सभी प्रशासनिक औपचारिकताओं की देखभाल करना आदि। इन औपचारिकताओं में टैक्स रिटर्न का ध्यान रखना, भारतीय रिजर्व बैंक और SEBI के मार्ग दर्शी सिद्धान्तों का परिपालन करते हुए लाभांश इकट्ठा करना और प्रेषण करना शामिल है।

## 4. सारांश (Summary)

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि सौदागर बैंक आवश्यक रूप से किसी कम्पनी के निर्गमन को बेचने में सक्रिय होता है तथा साथ ही अन्य सम्बन्धित कार्यों को संभालता है। प्रवासी भारतीयों को भारत के पूँजी बाजार की जानकारी देकर उनकी परिसम्पत्ति प्रबन्ध में मदद करता है। आज भारतीय एवं विदेशी सौदागर बैंकिंग सेवाओं (प्राथमिक तथा द्वितीय बाजारों) में प्रतिस्पर्धापूर्वक कार्य कर रहे हैं।

आज भारत में सौदागर बैंकिंग के क्षेत्र में भारतीय वाणिज्यिक बैंकों एवं विदेशी बैंकों के साथ-साथ निजी सौदागरों बैंकों एवं प्रमुख निजी दलालों ने निजी संस्थाएँ स्थापित करके सेवाएँ देना शुरू कर दिया है।

## 5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)

1. भारतीय वित्तीय प्रणाली – टी. आर. जैन एवं ओ. पी. खन्ना।

2. भारतीय वित्तीय प्रणाली – कुलदीप गुप्ता एवं डॉ. रामकुमार।

## 6. नमूने के प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. व्यापारिक बैंकिंग से क्या अभिप्राय है? व्यापारिक बैंकिंग के कार्यों का वर्णन करें। भारत में व्यापारिक बैंकर की भूमिका का वर्णन करें।

   What do mean Merchant Banking ? Explain the functions of Merchant Banking also explain the role played by merchant bankers in India.

2. व्यापारिक बैंकर का अर्थ बताइए। SEBI द्वारा व्यापारिक बैंकर के लिए बनाई गई व्यवहार संहिता का वर्णन करें।

   Explain the meaning of Merchant Banking. Describe Code of Conduct for merchant banking laid down by SEBI

3. व्यापारिक बैंकर की परिभाषा दें। व्यापारिक बैंकर की प्रकृति तथा उनके कार्यों का वर्णन करें।

   Define merchant Banking Explain the nature and functions of Merchant bankers.

**Paper : BC-206 (i) Indian Financial System** **Revised by : M.L. Singla**

**Lesson No. : 14**

# Institutional Financing in India

## Structure

1. परिचय (Introduction)
2. उद्देश्य (Objectives)
3. प्रस्तुतीकरण (Presentation)
   - 3.1 भारतीय जीवन बीमा निगम (LIC of India)
     - 3.1.1. उद्देश्य (Objective)
     - 3.1.2. कार्य (Functions)
     - 3.1.3 निवेश नीति (Investment Policy)
     - 3.1.4 प्रगति (Progress)
     - 3.1.5 जीवन बीमा निगम का निजीकरण (Privatisation of LIC)
     - 3.1.6 आलोचनाएँ (Criticisms)
     - 3.1.7 बीमा क्षेत्र में निजी कम्पनियों का प्रवेश (Entry of Private Companies)
   - 3.2 भारतीय सामान्य बीमा निगम (GIC of India)
     - 3.2.1. GIC और LIC में अन्तर (Difference between GIC And LIC)
     - 3.2.2 GIC की पालिसियाँ (Policies of GIC)
     - 3.2.3. निवेश (Investment)
   - 3.3. भारतीय युनिट ट्रस्ट (UTI)
     - 3.3.1 उद्देश्य (Objectives)
     - 3.3.2 कार्य (Functions)
     - 3.3.3. उपलब्धियाँ (Achievements)
     - 3.3.4 संकट (Crisis)
     - 3.3.5 सरकारी प्रयत्न (Government Efforts)
4. सारांश Summary)
5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Readings)
6. नमूने के प्रश्न (Self Assessment Questions)

## 1. परिचय (Introduction)

भारत में निवेश बैंकों से अभिप्राय उन सभी संस्थाओं से है जो मध्यम तथा दीर्घकालीन निवेश करती है। इनमें व्यापारिक बैंकों, औद्योगिक बैंकों तथा जीवन बीमा निगम और पारस्परिक कोष जैसी निवेश संस्थाएँ शामिल होती हैं। वे वित्तीय संस्थाएँ जो बन्धी पूँजी आवश्यकताओं के लिये उद्योगों को वित्त प्रदान करते है निवेश बैंक कहलाती है। उद्योगों के विस्तार एवं आधुनिकीकरण के लिये भी ये ऋण उधार देते हैं। भारत में ये बैंक प्रतिभूतियों के निर्गमों की हामी भर कर नये उद्योगों को प्रोत्साहित करते है। वे उद्योगों के शेयर्स भी खरीदते हैं अत: भारत में निवेश बैंकों से तात्पर्य वित्तीय संस्थाओं से है जैसे जीवन बीमा निगम और पारस्परिक कोष जैसे यू. टी. आई. निवेश बैंक में शब्द उन संस्थाओं पर भी लागू होता है जैसे औद्योगिक विकास बैंक और लघु उद्योग विकास है।

## 2. उद्देश्य (Objective)

इस पाठ का उद्देश्य आपको भारत में कार्यरत गैंर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं के उद्देश्यों, कार्यों एवं महत्व से अवगत करवाना है और इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप इन गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं की निवेश नीति एवं इनकी कार्य प्रणाली की कमियों को भी समझ सकेंगे।

## 3. प्रस्तुतिकरण (Presentation)

इस अध्याय ने भारत में संस्थागत वित्त व्यवस्था प्रदान करने वाली गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं मुख्यत: भारतीय जीवन बीमा निगम, सामान्य बीमा निगम एवं भारतीय युनिट ट्रस्ट के कार्यों, उद्देश्यों महत्व, निवेश नीति की विस्तार से चर्चा की गई।

एक देश में वित्तीय संस्थाओं को दो भागों में बाँटा जाता है।

1. बैंक
2. गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ

गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ वित्तीय संस्थाओं का बहुजातीय समूह है। इनमें व्यापक विविधता पाई जाती है। ये संस्थाएँ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जनता से कोष इकट्ठा करती हैं। ताकि वे उन कोषों को अन्तिम उधार लेने वालो को दे सके। भारत में मुख्यतया तीन प्रकार की निवेश संस्थाएँ पाई जाती हैं-

3.1 भारतीय जीवन बीमा निगम

3.2 सामान्य जीवन बीमा निगम

3.3 भारतीय यूनिट ट्रस्ट

### 3.1 भारतीय जीवन बीमा निगम (LIC of India)

भारतीय जीवन बीमा निगम भारत में जीवन बीमा का करीबन एकाधिकार लिये हुये है यह सबसे बड़ा संस्थागत निवेशकर्त्ता है। जीवन बीमा निगम की स्थापना से पहले भारत में 245 बीमा कम्पनियों देश में कार्य कर रही थी इन सभी बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण करके 1 सितम्बर 1956 का भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना की गई।

### 3.2 उद्देश्य (Objectives)

भारतीय जीवन बीमा निगम के मुख्य उद्देश्य है—

1. भारत में जीवन बीमा निगम को चलाना। क्योंकि जीवन बीमा दीर्घकालीन बचतों का एक महत्वपूर्ण रूप है।
2. LIC का उद्देश्य बचतों का बढ़ावा देना है।
3. जीवन बीमा करवाने वालों से भुगतान के रूप में इकट्ठी की गई बचतों का लाभकारी निवेश करना।

**संगठन**—LIC सरकारी स्वामित्व वाली निगम है। इसका प्रबन्ध निदेशकों के मंडल द्वारा किया जाता है इसके 15 से कम निदेशक नहीं होते तथा निदेशकों की नियुक्ति भारत सरकार द्वारा की जाती है। निगम का मुखिया कार्यपालक अध्यक्ष है। LIC का मुख्य कार्यालय मुम्बई ये हैं इसके 7 जानेल 100 प्रभागीय कार्यालय तथा 2048 शाखा कार्यालय है। निगम के कार्यालय विदेशी में भी है। यह यू. के. फीजी. मोरिशस में भी व्यावार संचालित करता है। निगम की पूँजी दो प्रकार की है—प्रारम्भिक पूँजी तथा बीमा किश्त पूँजी। भारत सरकार द्वारा LIC की पूँजी 5 करोड़ रुपये है। पॉलिसी कराने वालों द्वारा दी गई बीमा किश्त पूँजी का मुख्य स्त्रोत है।

**3.1.2 कार्य**—LIC के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं—

1. यह व्यक्तिगम तथा समूह आधार पर जीवन बीमा को बेचती है लम्बा जीवन जीने तथा युवावस्था में मृत्यु हो जाने के दोहरे जोखिमों के लिए LIC वित्तीय आरक्षण तथा सुरक्षा प्रदान करती है।
2. LIC निगमों के शेयरों, ऋण तथा डिबेंचरी के लिये अंशदान देती है तथा उनका जिम्मा लेती है।
3. विकास बैंकों द्वारा किये गये शेयरों तथा बाण्ड्स का अनुमोदन करती है।
4. LIC कम्पनियों को ऋण देती है शेयर तथ डिबेंचरी तथा ऋण में निवेश द्वारा LIC के कोष निजी क्षेत्र के लिये उपलब्ध होते है।
5. LIC व्यवसाय की हामी भरने के रूप में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
6. प्राथमिकता क्षेत्र और सामाजिक दृष्टि से वांछित क्रियाओं को वित्त प्रदान करना है।

### 3.1.3 निवेश नीति (Investment Policy)

LIC को अपने कोषों का कम से कम 50% सरकारी तथा अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में निवेश करना पड़ता है। LIC को अपने कोषों को 10% अन्य निवेशों में लगाना होता है। जिसमें राज्य सरकारी, नगर पालिका निगम तथा सहकारी चीनी कारखानों को दिये गये ऋण शामिल है। LIC अपने कोषों का 35% हिस्सा पालिसी धारकों को ऋण देने के लिए, बैकों या सहकारी समितियों से सावधि जमाएँ (Fixed Deposits) में लगा सकती है। LIC का मुख्य सिद्धान्त सुरक्षित कोषों का है न कि अपने निवेशों पर अधिकतम आय प्राप्त करना। चूँकि जीवन बीमा उद्देश्य के लिये दीर्घकालीन जीवन आवरण आवश्यक है। इसलिए सट्टा निवेशों की अवहेलना की जाती है।

### 3.1.4 प्रगति (Progress)

सन् 1999 तक LIC का कुल व्यवसाय 4,10,907 करोड़ रुपये का था। 1999 के दौरान LIC ने जो कुल व्यवसाय किया वह भारत में 75,316 करोड़ रुपये का था और भारत के बाहर 254 करोड़ का था। सन् 2000 तक LIC द्वारा किये गये कुल निवेश जो कि 139,059 करोड़ रुपये के थे उसमें सार्वजनिक क्षेत्र का प्रमुख शेयर 1,17,088 करोड़ रुपये था जबकि निजी क्षेत्र का भाग 19,844 करोड़ रुपये था शेष भाग सहकारी क्षेत्र तथा संयुक्त क्षेत्र को गया।

**जीवन बीमा की पुनः संरचना**—LIC बाजार में दूसरी सबसे बड़ी शेयरधारी है। LIC दीर्घकालीन निवेशकर्त्ता है यह दीर्घकालीन औद्योगिक विकास का बढ़ावा देती है। यह जीवन बीमे के रूप में महत्वपूर्ण वित्तीय मध्यस्थ के रूप में कार्य करती है निगम क्षेत्र तथा सरकार के लिये कोषों का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। बीमा क्षेत्र सुधार पर मल्होत्रा समिति ने अपनी रिपोर्ट 1994 को प्रस्तुत की थी। इसने सुझाव दिया था कि निजी क्षेत्र को बीमा क्षेत्र में प्रवेश करवाना चाहिए और विदेशी बीमा कम्पनियों के लिये इनमें प्रवेश बन्द कर दिया जाना चाहिए। तथा LIC की पुनः संरचना की भी सिफारिश की। मुख्य सिफारिश इस प्रकार हैं—

1. LIC की पूँजी 5 करोड़ का बढ़ा कर 200 करोड़ रुपये कर दी जानी चाहिए। पूँजी का 50% सरकार द्वारा दिया जाना चाहिए।
2. अपनी प्रचलन क्षमता में सुधार लाने के लिये LIC के केन्द्रीय तथा जोनल कार्यालयों की पुनः संरचना की जानी चाहिए।
3. LIC के कोषों का अनिवार्य निवेश 75% से घटा कर 50% कर देना चाहिए।
4. LIC की अपनी वस्तु कीमत नीति की समीक्षा करनी चाहिए।

इस प्रकार समिति ने वर्तमान प्रणाली में सुधार लाने के लिए विभिन्न प्रेरणाओं तथा विभिन्न कदमों की सिफारिश की है ताकि बीमा व्यवसाय का सामान्य रूप से स्वस्थ विस्तार तथा विकास हो सके। 1998-99 के बजट में वित्तमन्त्री ने घोषणा की है कि बीमा क्षेत्र को घरेलू निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया जाएगा।

### 3.1.5 जीवन बीमा निगम का निजीकरण (Privatisation of Life Insurance Corporation)

मल्होत्रा समिति की सिफारिशों के आधार पर 1999 में संसार द्वारा बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण कानून पारित किया गया। इस कानून के अनुसार बीमा क्षेत्र से सरकार के एकाधिकार को समाप्त कर दिया गया है। इस कानून को मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार है—

1. **निजी क्षेत्र का प्रवेश**—भारत में जीवन तथा सामान्य बीमा दोनों को ही निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया है।
2. **विदेशी भागीदारी**—इस कानून के अनुसार निजी क्षेत्र की भारतीय बीमा कम्पनी में विदेशी भागीदारी शेयर पूँजी का 26% से अधिक नहीं हो सकती।
3. **बीमा विनियामक तथा विकास प्राधिकरण (IRDA)**—केन्द्र सरकार ने 1996 में बीमा व्यवसाय को नियमित करने के लिये एक अन्तरिम प्राधिकरण की नियुक्ति की थी। सन् 1990 में इसे कानूनी दर्जा दे दिया है। अब देश में बीमा व्यवसाय का नियन्त्रण बीमा विनियामक तथा विकास प्राधिकरण के द्वारा किया जाएगा।

4. **शेयर पूँजी**—इस कानून के अनुसार निजी बीमा कम्पनी जो जीवन बीमा के साथ-साथ साधारण बीमा करना चाहती है उसकी शेयर पूँजी कम से कम 100 करोड़ होनी चाहिए।

5. **शोध क्षमता**—शोध क्षमता से अभिप्राय कम्पनी की देनदारियों की तुलना में परिसम्पत्तियों की अधिकता अर्थात् बीमा कम्पनी की परिसम्पत्तियाँ उसकी देनदारियों से कम से कम 50 करोड़ रुपये अवश्य होनी चाहिए।

6. **स्वास्थ्य बीमा को प्राथमिकता (Preference of Health Insurance)**—आजीवन स्तर क्षेत्र में स्वास्थ्य बीमा कम्पनियों को प्राथमिकता दी जाएगी।

7. **फण्ड्स की सुरक्षा**—पालिसी धारकों के फण्ड्स की सुरक्षा करने के लिये भी प्रावधान है जैसे बीमा कम्पनियां फण्ड्स का निवेश भारत से बाहर नहीं कर सकेगी।

8. **ग्रामीण तथा कमजोर वर्ग का बीमा**—प्रत्येक बीमा कम्पनी ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों, असंगठित क्षेत्र के मजदूरों, कमजोर व पिछड़े वर्ग के लोगों के लिये जीवन बीमा, साधारण बीमा जिसमें फसल बीमा शामिल है ऐसी पालिसी की व्यवस्था करेगी।

9. **दण्ड**—इस कानून के अनुसार जो बीमा कम्पनियां अपने सामाजिक दायित्वों को पूरा नहीं कर सकेगी। उन्हें 25 लाख रुपये का दण्ड देना पड़ सकता है। यदि जुर्माना देने के बाद अपने सामाजिक दायित्वों को पूरा नहीं किया जायेगा तो बीमा कम्पनी का लाईसेंस रद्द कर दिया जाएगा। अत: जीवन बीमा निगम औद्योगिक विकास की गति को बढ़ाने में सहायता देता है। ऋण देकर, शेयर व डिबेंचरों में निवेश करके LIC कम्पनियों को वित्तीय सहायता देता है ऋण देकर, शेयर व डिवेचरी में निवेश करके LIC कम्पनियों को वित्तीय सहायता देती है आज कल ये ऋण IDBI, IFCI, UTI, GIC, ICICI आदि के सहयोग से दिये जाते है। नई बाजार वास्तविकता को देखते हुए LIC ने बाजार स्थिति में अपने आपको समन्वित करके काफी सराहनीय कार्य किया है।

### 3.1.6 आलोचनाएँ (Criticism)

1. LIC की निवेश नीतियों के विरुद्ध यह कहा जाता है कि पालिसी धारकों को लाभ नहीं हुआ है यह तर्क दिया जाता है कि पालिसी धारकों की प्रीमियम ऊँचा देना पड़ता है जबकि बोनस नीची दरों पर दिया जाता है।

2. LIC निवेश का अधिकांश हिस्सा कम आय देने वाली सरकारी प्रतिभूतियों में जा रहा है। इससे निवेशित राशियों में कुल प्रतिफल कम प्राप्त हो रहा है जिस कारण ऊँचे प्रीमियम रेट लागू किये गये है।

3. सामान्यतया यह देखा गया है कि सभी प्रीमियम समय पर देने के बावजूद पालिसी धारकों को अपनी पालिसी का भुगतान सही समय पर तथा पूरी मात्रा में प्राप्त नहीं हुआ है।

### 3.1.7 बीमा क्षेत्र में निजी कम्पनियों का प्रवेश (Entry of Private companies in Insurance Sector)

केन्द्र सरकार ने 19 अप्रैल, 2000 को श्री एन. रंगाचारी की अध्यक्षता ने बीमा विनियामक तथा विकास प्राधिकरण (Insurance Regulatory Development Authority) का गठन किया। इसके गठन करने

का उद्देश्य बीमा क्षेत्र में निजी कम्पनियों के प्रवेश का मार्ग प्रशस्त करना था। हांलाकि देश में बीमा क्षेत्र का निजीकरण केन्द्र सरकार द्वारा अप्रैल 1993 में गठित मल्होत्रा समिति का सिफारिशों के आधार पर किया गया है। बीमा क्षेत्र में प्रवेश करने वाली कम्पनियों में विदेशी इक्विटी की अधिकतम सीमा 26 प्रतिशत निर्धारित की गई है तथा देश में बीमा क्षेत्र में नियमन हेतु बीमा विनियमन तथा विकास प्राधिकरण (IRDA) की स्थापना की गई है। इस प्राधिकरण के निर्देशों को बदलने तथा इसे दिशा-निर्देश देने का अधिकार संसद के पास है और यह प्राधिकरण पूर्णत: संसद के प्रति उत्तदायी होगा।

बीमा क्षेत्र में बैंकों के प्रवेश हेतु भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा मार्च 2000 में दिशा-निर्देश जारी किए। इन दिशा-निर्देशों के तहत प्रस्तावित मानकों को पूरा करने वाले ही देश में बीमा कारोबार करने के लिए संयुक्त उपक्रम कम्पनियों की स्थापना सकेंगे। इन कम्पनियों की इक्विटी में सम्बन्धित बैंक की भागीदारी अधिकतम 50 प्रतिशत होगी। इन संयुक्त उपक्रम कम्पनियों में भागीदारी हेतु बैंकों के लिए 31 मार्च, 2000 को निम्नलिखित मानकों को पूरा करना आवश्यक था।

1. बैंक की शुद्ध पूँजी (Net worth) कम से कम 500 करोड़ रुपये होनी चाहिए।
2. बैंक की गैर-निष्पादक सम्पत्तियाँ संतोषजनक स्तर पर होनी चाहिए।
3. पिछले लगातार तीन वर्षों में बैंक ने शुद्ध लाभ कमाया हो।
4. बैंक का पूँजी पर्याप्यता अनुपात कम से कम 10 प्रतिशत हो।
5. यदि बैंक की कोई अनुपंगी इकाई है तो आपका निष्पादन सन्तोषजनक होना चाहिए।

IRDA ने अब तक इस कम्पनियों को लाईसेंस जारी कर दिए है।

देश के सबसे बड़े वाणिज्यिक बैंक स्टेट बैंक आफ इंडिया ने जीवन बीमा क्षेत्र में अपनी अनुपंगी कम्पनी एस. बी. आई. लाइफ इन्श्योरेंस कम्पनी (SBI Life) के माध्यम से जून, 2001 में प्रवेश किया तथा अपनी पहली बीमा पालिसी को संजीवन (Sanjeevan) नाम से बिक्री हेतु जारी किया है। कम्पनी ने इस पालिसी को मुख्यत: स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति लेने वाली को लक्ष्य बनाकर जारी किया है इस पालिसी के द्वारा एक मुश्त राशी देकर 75 वर्ष तक की आयु तक बीमा सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है।

भारतीय स्टेट बैंक ने बीमा कारोबार हेतु फ्रांस की कार्डिफ एस. ए. (Cardif S.A.) के साथ मिलकर संयुक्त उपक्रम के तौर पर इस बीमा कम्पनी का गठन किया है। इस कम्पनी की चुकता पूँजी 175 करोड़ रुपये है जिसमें भारतीय स्टेट बैंक व कार्डिफ की भागीदारी क्रमश: 74 व 26 प्रतिशत है। इस कम्पनी का मुख्यालय मुम्बई में है। विपणन हेतु प्रथम चरण में बैंक की चुनिंदा 100 शाखाओं को अधिकृत किया गया। हालांकि स्टेट बैंक के अध्यक्ष जानकी बल्लभ ने 15 जून, 2001 को इस कम्पनी के पहले उत्पद संजीवन को बिक्री के लिए जारी करते हुए कहा था कि इसका विपणन देश भर में फैली भारतीय स्टेट बैंक की 9024 शाखाओं के साथ-साथ इसके अनुपंगी बैंकों की शाखाओं के माध्यम से भी किया जाएगा।

इसी प्रकार बीमा क्षेत्र में बढ़ती प्रतियोगिता के परिप्रेक्ष्य में भारतीय जीवन बीमा निगम (LIC of India) ने पहली बार 13 फरवरी, 2001 से पूँजी बाजार सम्बन्ध (Capital Market Linked) बीमा योजना का शुभारम्भ किया है। इस योजना के तहत बीमा कराने वाले को जीवन बीमा के लाभ के अतिरिक्त दुर्घटना

बीमा एवं पूँजी बाजार में निवेश के लाभ भी मिलेंगे और चुकाये गए प्रीमियम की राशी पर आयकर अधिनियम की धारा 80 C के तहत उपलब्ध छूट भी प्राप्त होगी। हालांकि पॉलिसी धारकों को इस योजना के तहत निवेश के तीन विकल्प सुरक्षित निधि, संतुलित निधि व जोखिम निधि उपलब्ध है और वह अपनी पसन्द के आधार पर किसी का भी चुनाव कर सकता है।

### 3.2 भारतीय सामान्य बीमा निगम (General Insurance Corporation of India (GIC)

भारतीय सामान्य बीमा निगम की स्थापना सन् 1973 में हुई जब सामान्य बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया था। राष्ट्रीयकरण के समय 63 भारतीय कम्पनियों तथा 45 गैर-भारतीय कम्पनियों थी इन सब का राष्ट्रीयकरण करके बीमा निगम तथा इसकी चार सहायक कम्पनियों की स्थापना हुई—

1. National Insurance Co. Ltd.
2. New India Insurance Co. Ltd.
3. Oriental Fire and General Insurance Co. Ltd.
4. United India Insurance Co. Ltd.

GIC एक होल्डिंग कम्पनी है और इसका प्रत्यक्ष व्यवसाय केवल विमानन बीमा तक ही प्रबिन्धित है सामान्य बीमा की देखभाल GIC के सहायकों द्वारा की जाती है। समाज के विभिन्न वर्गों की आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की पालिसियों का प्रचलन करती है। भारतीय पूँजी बाजार में GIC एक निवेश संस्था के रूप में उभर कर आगे आई है।

सामान्य बीमा निगम को समुद्री बीमा, आग तथा विविध में वर्गीकृत किया जाता है। समुद्री बीमा भारत में सीमित है लेकिन विविध व्यवसाय में काफी वृद्धि हो रही है। आम बीमा मुख्य व्यवसाय में शामिल किया जाता है।

#### 3.2.1 GIC तथा LIC में अन्तर (Difference between GIC and LIC)

1. GIC का व्यवसाय LIC में विभिन्न है क्योंकि LIC के विपरीत सामान्य बीमा पालिसियां वित्तीय दावे है।
2. सामान्य बीमा कवर जोखिमों के बाँटने पर आधारित है ये जोखिम दुर्घटना तथा अप्रत्याशित घटनाओं के कारण उत्पन्न हो सकते है। तथा अल्प अवधि के होते है। जबकि जीवन बीमा का सम्बन्ध एक वर्ष या इससे कम है।
3. सामान्य बीमा निगम का निवेश करने का ढंग भी जीवन बीमा निगम से बिल्कुल अलग है।
4. सामान्य बीमा निगम, जीवन बीमा निगम की तरह लोगों की जमाओं को इकटठ्ा नहीं करता।

#### 3.2.2 GIC पालिसियाँ (Policies of GIC)

भारत में सामान्य बीमा निगम कई प्रकार की पालिसियाँ प्रस्तुत करता है जो औद्योगिक क्षेत्र, व्यापारिक क्षेत्र तथा सामाजिक क्षेत्रों की क्रियाओं से जुड़े हुये जोखिमों को कवर करता है। सामान्य बीमा निगम उस स्थिति में क्षतिपूर्ति की गारंटी देता है जब पालिसी धारकों को किसी बीमा करवाये हुये खतरे के घटित हो जाने पर वित्तीय हानि उठानी पड़ जाती है।

**GIC** की मुख्य नीतियाँ इस प्रकार है—

1. **उद्योग (Industry)**—उद्योगों में आग के जोखिम व खतरे, मशीनरी की टूट-फूट, चोरी, वस्तुओं को लाते ले जाते समय जोखिमों को कबर किया जाता है।

2. **व्यक्ति/परिवार (Individual/Family)**—इसमें व्यक्ति की दुर्घटना को कवर किया जाता है जैसे हवाई सफर, भारत में चिकित्सा बीमा, सामान का बीमा, विदेश में सफर करते कोई दुर्घटना आदि।

3. **ग्रामीण क्षेत्र (Rural Area)**—इसमें फसलों, पशु, मुर्गी पालन, कृषि यन्त्र तथा ग्रामीण कारीगरों को कवर किया जाता है।

4. **आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग (Economically Backward Section)**—इसमें आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुये लोगों के लिये व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा, सामाजिक सुरक्षा स्कीम, सामान का बीमा आदि को कवर किया जाता है।

### 3.2.3 निवेश (Investment)

GIC की निवेश नीतियों का उद्देश्य आय को अधिकतम करना, सुरक्षा निर्धारित करना, कोषों को तरलता प्रदान करना तथा उपलब्ध साधनों को राष्ट्रीय उद्देश्य तथा प्राथमिकताओं के अनुरूप लगाना है। सरकारी मार्ग दर्शन के अनुसार GIC को अपने कोषों का 70% भाग अर्थव्यवस्था के समाज परक क्षेत्रों में निवेश किया जाना आवश्यक है। GIC के बाजार प्रचलन का स्टॉक बाजार पर स्थिर प्रभाव पड़ा है। यह औद्योगिक क्षेत्र की वित्तीय सहायता प्रदान करती है। वित्तीय सहायता का ये कार्य GIC 1976 से अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं के साथ औद्योगिक परियोजना व संघीय वित्त प्रबन्ध में भाग लेकर कर रही है।

अर्थव्यवस्था के विकास के साथ-साथ GIC व इसके सहायकों ने अपने प्रभाव क्षेत्र का काफी विस्तार किया है। GIC की कुल प्रीमियम आय जो लगभग LIC जितनी ही है। 1998-99 में 8579 करोड़ रुपये थी। सन् 2000 में GIC और इसकी सहयोगी संस्थाओं ने 2142 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता दी। बीमा क्षेत्र जीवन तथा अन्य जोखिमों दोनों को वित्तीय मध्यस्थ के रूप में बीमा प्रदान किया है। यह सरकार के लिये तथा निगमीय क्षेत्रों के लिये कोषों का महत्वपूर्ण स्त्रोत है क्योंकि GIC सामाजिक रूप से वांछनीय क्षेत्रों को प्रत्यक्ष निवेश उपलब्ध कराती है। बीमा क्षेत्र कार्य प्रणाली में जो भी कमियाँ आई है GIC उन्हें दूर करके आने वाले वर्षों में अधिक कुशलता से कार्य प्रणाली में सुधार लाने के लिये तत्पर है।

## 3.3 भारतीय यूनिट ट्रस्ट (UTI) Unit Trust of India

UTI गैर-बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थता का एक महत्वपूर्ण रूप है UTI एक ऐसी संस्था है जो छोटे निवेशकर्त्ता को भारत के औद्योगिक विकास का एक भाग और न्यूनतम जोखिम तथा उचित आय के साथ उत्पादक निवेश प्रदान करता है। UTI की स्थापना UTI Act 1964 के अधीन फरवरी 1964 में हुई थी। इसने अपना कार्य 1 जुलाई 1964 से शुरू किया।

### 3.3.1 उद्देश्य (Objectives)

UTI का मुख्य उद्देश्य समाज के लोगों की छोटी-छोटी बचतों की एकत्रित करना तथा उन्हें उत्पादक निवेश में लगाना है। इसका उद्देश्य दूर-दूर फैले और व्याप्त उद्योगों के स्वामित्व को प्रोत्साहन करना

है। ताकि निवेशकर्त्ता न्यूनतम जोखिम के साथ उचित प्रतिफल के आश्वासन के शेयर अर्जित कर सके। इस प्रकर UTI के दो मुख्य उद्देश्य है।

1. मध्यम तथा निम्न आय वर्ग को लोगों की बचतों को बढ़ावा देना तथा जमा करना है।
2. युनिट धारकों को इस योग्य बनाना कि वे तीव्रता से बढ़ते औद्योगिकरण के लाभों तथा प्रगति में भाग प्राप्त कर सके।

ऊपर व्यक्त किये उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये UTI निम्न दृष्टिकोण को अपनाता है—

(i) देश के विभिन्न भागों में अधिकतम यूनिट्स को निवेशकर्ताओं में बेच कर।

(ii) यूनिटों की बिक्री प्राप्तियों को औद्योगिक तथा निगम प्रतिभूतियों में निवेश करके।

(iii) यूनिट धारियों को लाभांश दे कर।

**पूँजी (Capital)**— UTI का पूँजी संरचना के दो स्तर हैं—

(a) प्रारम्भिक पूँजी, (b) इकाई पूँजी

ट्रस्ट की स्थापना 5 करोड़ रुपये की प्रारम्भिक पूँजी से हुई थी। जिसका अंशदान विभिन्न संस्थाओं में इस प्रकार से किया गया था—

(1) भारतीय रिजर्व बैंक 2.5 करोड़ रुपये।

(2) अनुसूचित बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाएं 1 करोड़ रुपये।

(3) जीवन बीमा निगम 75 लाख रुपये।

(4) स्टेट बैक और इसके सहायक 75 लाख रुपये।

1976 में रिजर्व बैंक के पूँजी निवेश IDBI को हस्तांतरण कर दिया गया। इस प्रकार को IDBI को UTI का सहयोगी बना दिया गया। UTI ने जनता में यूनिट्स बेच कर सन् 1999 में 55707 करोड़ रुपये यूनिट पूँजी को बढ़ा लिया है।

**संगठन**—UTI का प्रबन्ध न्यासियों के मण्डल द्वारा किया जाता है। इसमें एक चयरमैन तथा 9 ट्रस्टी है। चयरमैन की नियुक्ति IDBI के परामर्श पर भारत सरकार द्वारा की जाती है। UTI का मुख्य कार्यालय मुम्बई में है इसके चार जोनल कार्यालय मुम्बई, कलकत्ता, मद्रास तथा नई दिल्ली में है। इसकी 51 शाखाएँ पूरे भारत में फैली हुई है।

### 3.3.2 कार्य (Functions)

यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया के मुख्य कार्य दो प्रकार के हैं—

1. **बचतों को एकत्रित करना (Mobilization of Savings)**—UTI विभिन्न स्कीमों के अन्तगर्त यूनिटस बेच कर समाज की बचतों को एकत्रित करती है। निवेशकत्ताओं की रूचि के अनुसार UTI ने 79 स्कीमों को शुरू किया है। UTI ने पहली स्कीम US-64 सन् 1964 में शुरू की थी और

यह अब तक की सबसे महत्वपूर्ण स्कीम रही है। इसके बाद UTI ने कई और स्कीमें भी शुरू की है जिसमें Master Share और Master Share Plus भी है।

2. **संसाधनों का निवेश (Investment of Resources)**—UTI अपने कोषों को शेयरों और प्रतिभूतियों में निवेश करती है। UTI हामी भरने का कार्य करती है तथा प्रत्यक्ष रूप से कम्पनियों को अभिदान दे कर वित्तीय सहायता उत्पन्न करती है। UTI अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं से मिल कर कार्य करती है। 1986 में संशोधित UTI Act पर यह समयावधि ऋण तथा कटौती बिलों को स्वीकृत करती है। तथा पट्टे पर साज सज्जा और भाड़ा क्रय वित्त भी लेती है। UTI अर्थव्यवस्था के पूँजी बाजार और निगम क्षेत्र की प्रवृत्तियों और शक्तियों के अन्दर, निरन्तर अनुसंधान और विश्लेषण द्वारा समर्पित की जाती है। इसने 1991 से उदारीकरण की नीति की घोषणा के बाद निजी क्षेत्र में सबसे पहला बैंक स्थापित किया।

### 3.3.3 उपलब्धियाँ (Achievements)

भारतीय यूनिट ट्रस्ट ने छोटे निवेशकर्त्ताओं की बचतों को एकत्रित करके और उन कोषों को उत्पादक निवेश में लगा कर भारतीय अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह छोटे बचतकर्त्ताओं की बचत को इकट्ठा करके उत्पादक उद्यमों में लगाती है। UTI की मुख्य उपलब्धियों इस प्रकार हैं।

1. **बचतों का एकत्रीकरण (Mobilization of Savings)**—यूनिटों की बिक्री करके UTI छोटे निवेशकर्त्ताओं की बचतों को इकट्ठा करती है। अब तक UTI द्वारा सभी यूनिटों को बेच कर 14000 करोड़ रुपये खर्च किये हैं इसकी अधिकतर स्कीमें काफी लोकप्रिय हैं। UTI की प्रथम स्कीम Unit Scheme 1964 सबसे अधिक लोकप्रिय हुई। इसमें 450 लाख निवेशकर्त्ताओं के खाते हैं।

2. **विदेशी पूँजी का एकत्रीकरण (Mobilization of Foreign Capital)**—यूनिट ट्रस्ट ने विदेशों से पूँजी का एकत्रीकरण करने के लिये कई योजनाएँ शुरू की हैं—

    1. ट्रस्ट ने 1986 में समुद्र पार कोष शुरू किया है जिसे India Fund कहा जाता है।
    2. 1986 में India Growth Fund प्रवाहित किया जिसकी सूची न्यूयार्क में है।
    3. 1994 में दूसरा समुद्र पार कोष शुरू किया है जिसे Columbs India Fund कहा जाता है।
    4. UTI ने पहला India Index fund आरम्भ किया है। इसे India Access fund कहा जाता है।
    5. UTI ने 1997 में पहला विदेशी कोष शुरू किया है। इसे India Debt fund कहा जाता है।

3. **निवेश (Investment)**—UTI लोगों की बचतों को एकत्रित करके उसे निवेश निम्नलिखित ढंग से करता है।

    1. कम्पनियों के शेयरों और डिबेन्चरों में निवेश यूनिट ट्रस्ट द्वारा अपनी जमाओं का 85% होता है।

2. ट्रस्ट अपनी पूँजी का कम्पनियों के पास समय जमाओं के रूप में भी निवेश करता है। यह कुल निवेश का 3% होता है। तथा 1987 के बाद ये कार्य शुरू किया गया है।

3. UTI मुद्रा बाजार में भी अल्पकालीन निवेश करता है।

4. UTI अपनी जमाओं का कुछ हिस्सा सरकारी प्रतिभूतियों में भी निवेश करता है।

**4. सहायक कम्पनियाँ (Associate Companies)**—UTI में अपने निवेशकर्त्ताओं के लिये कई सहायक कम्पनियों की स्थापना की है जैसे—

1. 1994 में यू. टी. आई. बैंक की स्थापना की। यह निजी क्षेत्र का पहला बैंक है।

2. 1994 में ही यू. टी. आई. सिक्योरिटी एक्सेंचज बैंक लि. की स्थापना की।

3. 1993 में यू0 टी. आई. इनवेस्टर्स सर्विसेज लि. की स्थापना की। प्रतिभूतियों का पंजीकरण तथा हस्तांतरण करती है।

4. 1989 में यू. टी. आई इंसटीचयट ऑफ कैपिटल मार्केटिंग लिमिटेड की स्थापना की।

5. 1998 में यू. टी. आई. इन्वेरटमेंट एडवाईजरी सर्विसेज लि. की स्थापना की। ये अमेरिका में पंजीकृत है तथा निवेश सम्बन्धी परामर्श देती है।

**5. नई योजनाएँ (New Schemes)**—यूनिट ट्रस्ट निवेश को अच्छे प्रदर्शन वाले क्षेत्रों के लिए कई योजनाएँ बना रही है। इसी दिशा में 1999 में ग्रोथ सेक्टर फंड शुरू किया गया है इनका उद्देश्य विशेष क्षेत्रों की कम्पनियों में निवेश करना है। अन्तर्राष्ट्रीय निवेशकों के लिये UTI इन्फ्रास्ट्रक्चर फंड शुरू करने की योजना बना रही है।

**6. कार्य प्रणाली में सुधार (Reform in the working)**—सन् 1998 में शेयर बाजार में मंन्दी आने के कारण यूनिट ट्रस्ट के मूल्यों में काफी कमी आ गई थी। यूनिट स्कीम 1964 के निवेश मूल्य में अचानक काफी कमी आ गई। इसके फलस्वरूप उसकी सुरक्षित निधियाँ ऋणामक हो गई। जिस कारण यू. टी. आई. में जमाकर्त्ताओं का विश्वास कम हो गया। सरकार ने श्री दीपक पारेख की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। इस समिति ने यू. टी. आई. की कार्यप्रणाली में सुधार लाने के लिये कई सुझाव दिये। इन समिति ने 19 सिफारिशें कीं। जिनमें 9 सिफारिशों को लागू कर दिया गया है। मुख्य सिफारिशें इस प्रकार की हैं—

1. US-64 के निवेशकों को राजकोषीय प्रोत्साहन।

2. लाभांश के वितरण प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन।

3. US-64 योजनाओं को तीन वर्षो की अवधि में उसके शुद्ध प्राप्ति के आधार पर संचालित योजना में परिवर्तन करना।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि कोषों को इकट्ठा करने के अलावा UTI भारतीय स्टाक बाजारों में एक महत्वपूर्ण निवेशकर्त्ता बन गया है और देश के औद्योगिक विकास के लिये उद्योगों को बहुत अधिक मात्रा में वित्त उपलब्ध कराने वाली संस्था बन गई है। अगर सैद्धान्तिक दृष्टि से देखा जाए तो UTI एक विशेष सराहनीय कार्य कर रही है क्योंकि यह समाज की छोटी–छोटी बचतों को एकत्र करके

व्यापार तथा उद्योग में निवेश करवाता है। यू. टी. आई. में निवेशित पूँजी न केवल सुरक्षित है बल्कि एक प्रकार से तरल भी है क्योंकि यूनिटों को UTI को कभी भी दोबारा बेचा जा सकता है।

### 3.3.4 संकट (Crisis)

हाल ही में यू. टी. आई. एक वास्तविक संकट से गुजर रही है। लोगों का UTI पर से विश्वास कम हो गया है और सरकार इसमें भारी राशी लगा कर भी इसे चालू रखना चाहती है।

शेयर बाजार से व्यवहार करते समय यू. टी. आई. आक्रामक बन गई थी। इस का प्रबन्ध इस बात को भूल गया कि यह सामान्य शेयर पर कोष नहीं बल्कि आय कोष है।

UTI का प्रबन्ध इस बात को भी देखने में असफल रहा कि पारस्परिक कोष (Mutual Fund) उद्योग विविध (Diversified) होता जा रहा है और बाजार में इसकी भूमिका धीरे-धीरे कम हो रही है।

UTI की सबसे बड़ी भूल US-64 से सम्बन्धित थी इसने US-64 को निगमों के लिये मुद्रा बाजार कोष के रूप में चलाया और उन्हें बाजार आय से ऊपर का आश्वासन दिया।

संकट का एक और कारण यह भी था कि UTI ने US-64 के शुद्ध परिसम्पत्ति मूल्य को प्रकट करने से इन्कार कर दिया। घोषित खरीद और पुन: खरीद कीमतों को शुद्ध परिसम्पत्ति मूल्य से कोई सम्बन्ध नहीं था। निवेशकर्त्ताओं को उस समय बहुत धक्का लगा जब यह बताया गया कि शुद्ध परिसम्पत्ति मूल्य मई 2001 के 14 रुपये से घट कर दिसम्बर 2001 के अन्त पर मात्र 6 रुपये रह गया।

एक और भूल UTI ने की कि एक वर्ष बाद संचयी आय स्कीम को शुरू करना। इन सभी स्कीमों ने UTI को बहुत हानि पहुँचायी।

संक्षेप में, भारत सरकार ने स्थिति को संभालने के लिये और यू. टी. आई. के संकट को खत्म करने के लिये एक योजना बनाई। केवल US-64 को संकट से बाहर निकालने के लिये 5500 करोड़ की लागत आँकी गई। विश्वासित आय योजनाओं को भी संकट से बाहर निकाला जायेगा। UTI द्वारा निवेशकर्त्ताओं को दिये गये वादों को भी पूरा किया जायेगा। अगर UTI की इक्यूटी मार्किट पूरी तरह से पुनर्जीवित नहीं होती तो इस पर भी खर्चा करीबन 12000 करोड़ आयेगा। अगर UTI का विघटन होता है तो देश की वित्तीय स्थिति पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा।

### 3.3.5 सरकारी प्रयत्न (Government Efforts)

भारत सरकार ने 31 अगस्त 2002 को भारतीय यूनिट ट्रस्ट का विभाजन दो भागों में कर दिया है। US-64 के कारण UTI पर छाये संकट के बादलों को हटाने के लिये तथा UTI की स्थिति में सुधार लाने के लिये इसका विभाजन दो भागों में किया गया है।

(1) **पूर्व सुरक्षित भारतीय यूनिट ट्रस्ट**—पूर्व सुरक्षित UTI-I में US-64 भी शामिल है तथा इनकी कुल खरीद का मूल्य घोषित कर दिया गया है। सरकार UTI-I में होने वाले किसी भी घाटे की क्षतिपूर्ति वार्षिक करेगी। इसका प्रबन्ध सरकार द्वारा नियुक्त एक प्रशासक तथा सलाहकारों की एक टीम करेगी।

(2) **नया भारतीय यूनिट ट्रस्ट-II**—नये UTI-II में सभी मूल्य आधारित स्कीमें शामिल हैं। इनका प्रबन्ध एक निश्चित अवधि के लिये एक बार्ड ट्रस्टीज और उसके चेयरमैन करेंगे। एक निर्धारित समय के पश्चात् इसका विनिवेश कर दिया जायेगा।

UTI-I और UTI-II का संचालन भारतीय स्टाक एक्सचेंज बोर्ड के कानून के अन्तगर्त होगा। यू. टी. आई और यू. टी. आई-II के बीच परिसम्पत्तियों एवम् दायित्वों के वितरण का निर्धारण तथा इन दोनों संस्थाओं के कार्य संचालन सम्बन्धी नियम भारत सरकार के वित्त मन्त्रालय द्वारा निर्धारित किये जायेंगे।

### सारांश (Summary)

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद हम यह कह सकते हैं कि बीमा क्षेत्र जीवन तथा अन्य जोखिम दोनों को वित्तीय मध्यस्थ के तौर पर बीमा प्रदान करने के साथ-साथ निगमीय क्षेत्र एवं सरकार के लिए कोषों का महत्वपूर्ण स्त्रोत है क्योंकि यह सार्वाजनिक दृष्टि से आवश्यक क्षेत्रों के विकास हेतु प्रत्यक्ष निवेश उपलब्ध करवाता है। बीमा क्षेत्र की कार्यप्रणाली की कमियों को सुधार कर पाने वाले वर्षो में इससे अधिक सफलता की अपेक्षा की जा सकती है। अब बीमा क्षेत्र की निजी क्षेत्र के लिए खोलने से प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी जिससे इस क्षेत्र से अच्छे परिणाम की उम्मीद की जा सकती है। एक अन्य निवेश संस्था, भारतीय यूनिट ट्रस्ट भी लोगों की छोटी-छोटी बचतों को इकट्ठा करके देश में पूँजी निर्माण करने में अहम भूमिका निभा रही है। और व्यावसायिक क्षेत्र को कोष (पूँजी) प्रदान करने का कार्य कर रही है। जिससे देश के औद्योगिक विकास को बढ़ाया देने में मदद मिलती है।

### 5. प्रस्तावित पुस्तकें (Suggested Books)

1. भारतीय वित्तीय प्रणाली - कुलदीप गुप्ता एवं डा. रामकुमार।
2. भारतीय वित्तीय प्रणाली - टी. आर. जैन एवं ओ. पी. खन्ना।

### 6. नमूने के प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. निवेश संस्थाओं से क्या अभिप्राय है ? भारत में प्रमुख निवेश संस्थाओं का वर्णन करें।
   (What are Investment Institutions ? Give a brief description of the main investment institutions in India.)

2. भारतीय जीवन बीमा निगम के उद्देश्य, कार्यों तथा निवेश नीति का व्याख्या करे। इसकी प्रगति का मूल्यांकन भी करें।
   (Explain the Objectives, functions and investment policy of Life Insurance, Corporation of India. Give a brief review of its progress)

3. आर्थिक विकास को तीव्र करने में LIC किस प्रकार सहायता करती है। मल्होत्रा समिति द्वारा LIC के निजीकरण हेतु दिए गए सुझाव भी लिखें।
   (How does LIC in accefrating economic growth ? Write the suggestions given by Malhotra Committee Privatization of LIC)

4. भारतीय सामान्य बीमा निगम की मुख्य पालिसियाँ क्या है ? इसके निवेश प्रतिरूप तथा निवेश नीतियों की व्याख्या करें।
(What are the main policies of General Insurance Corportation of India ? Discuss its investment pattern and Policies)

5. UTI के उद्देश्य एवं कार्यों का वर्णन करें। आर्थिक विकास में इसका क्या योगदान है?
(Explain the objectives and functions of UTI. What is its contributions in economic development ?)

6. UTI की प्रगति का मूल्यांकन करें।
(Evaluate the progress of UTI)

●●